॥ ॐ श्री गंगाईनाथाय नमः॥

स्पिरिचुअल साइंस

Spiritual Science

अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर द्वारा प्रकाशित

वर्ष : 10 | अंक : 120 | जोधपुर : हिन्दी, अंग्रेजी व गुजराती मासिक पत्रिका | मई– 2018 | 30/–प्रति

''केवल नाम जपो,
नाम जप से ही आपका
कल्याण होगा''
–सद्गुरुदेव सियाग

www.the-comforter.org

File Photo

ऑनलाइन शक्तिपात-दीक्षा प्राप्त करने के लिए लॉग-ऑन करें-
Web : www.the-comforter.org

मंत्र दीक्षा के लिये मोबाइल नम्बर डायल करें -
07533006009

।। ॐ श्री गंगाईनाथाय नमः ।।

''इस आध्यात्मिक ज्ञान का दान तो हमेंशा भारत ही करता आया है और अभी भी करेगा। ये ऐसा समय आ रहा है कि भारत वापस विश्व गुरु बनेगा, अपनी Golden Age (स्वर्णयुग) में जाएगा। आज का मानव युग परिवर्तन के संधिकाल में जी रहा है-महर्षि श्री अरविन्द ने कहा है कि - 'Iron age is Ended' अर्थात् कलियुग खत्म हो चुका है, मगर बोलबाला अभी कलियुग का ही है, लेकिन ऐसा विस्फोट होगा कि दुनिया चकाचौंध रह जाएगी कि ये क्या हो गया ?''

-समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

।। ॐ श्री गंगाईनाथाय नमः

अध्यात्म विज्ञान सत्संग केंद्र

जोधपुर

''पूर्वांचल से उदित सवितादेव
के साथ समाधि के
उच्चतम शिखर बिन्दु
'तद्रूप' नीले ध्वज तले
सनातन धर्म का शुभ संदेश।''

www.the-comfortzone.com

"ॐ श्री गंगाई नाथाय नमः"

स्पिरिचुअल साइंस

Spiritual Science

गुरुदेव श्री रामलालजी सियाग

अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर द्वारा प्रकाशित

बाबा श्री गंगाईनाथजी योगी (ब्रह्मलीन)

वर्ष : 10 अंक : 120 जोधपुरः- हिन्दी, अंग्रेजी व गुजराती मासिक पत्रिका मई – 2018

वार्षिक 300/- द्विवार्षिक : 600/- आजीवन (11 वर्ष) : 3000/- मूल्य 30/-

संस्थापक एवं संरक्षक :
पूज्य सद्गुरुदेव
श्री रामलालजी सियाग
(ब्रह्मलीन)

सम्पादक :
रामूराम चौधरी

कार्यालय :
Spiritual Science
पत्रिका
अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र

पो.बॉक्स नं.41,
होटल लेरिया के पास,
चौपासनी, जोधपुर (राज.) भारत

9784742595

E-mail :
spiritualscienceavsk@gmail.com

Ashram :
Adhyatma Vigyan Satsang Kendra
Near Hotel Leriya,
Chopasani, JODHPUR (Raj.)
INDIA - 342 003
☎ +91 0291-2753699
Mob. : +91 9784742595
e-mail :
avsk@the-comforter.org
Website :
www.the-comforter.org

अनुक्रम

अन्तर्मुखी आराधना....4
ब्रह्माजी के थैले...समझो सद्गुरु के चेले (सम्पादकीय)....5
भगवान् मनुष्य रूप में अवतार क्यों लेते हैं?....6
समर्थ सद्गुरुदेव....7
साधकों के लिए विशेष....8
Religious Revolution in the World....9
हृदय मंथन....10
योगियों की आत्मकथा....11
विरोधी शक्तियों का प्रतिरोध....12
योग के आधार....13
मेरे गुरुदेव....14
सद्गुरुदेव से अन्तर्मन से जुड़ाव....15
परमानंद का अनुभव (कहानी)....16-17
उदासीनता आराधना में बाधक....18
चित्र पृष्ठ....19-22
अनुभूतियाँ तथा रोगों व नशों से मुक्ति....23-24
अनुभव–प्रधान युग का आगमन....25
मनुष्य और विकास....26
सिद्धयोग....27
योग के बारे में....28
अहं से मुक्ति....29
संस्था के उद्देश्य....30
અદ્ભૂત સિદ્ધયોગ....31
मुझे परमसत्ता ने संसार के सामने....32-34
मंत्र जप....35
सम्पादकीय शेष पृष्ठ....36-37
ध्यान विधि....38

www.the-comforter.org

अन्तर्मुखी आराधना

-समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

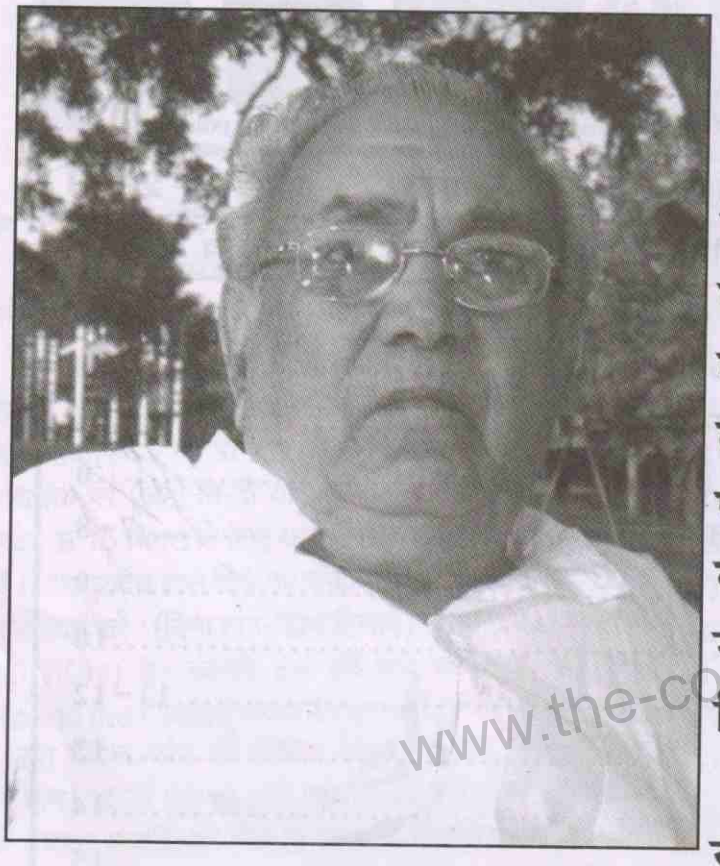

प्रकृति कभी किसी स्थान को रिक्त नहीं छोड़ती है, जिस प्रकार बुड्ढ़ा मनुष्य मरता है, उससे पहले बच्चा जवान होकर उसका स्थान लेने को तैयार हो जाता है, उसी प्रकार का बदलाव संसार की हर वस्तु में निरन्तर हो रहा है। गति का नाम ही जीवन हैं। संसार की हर वस्तु निरन्तर गतिशील है।

सृजन की शक्ति युवा काल ही है। यह सिद्धान्त संसार की हर वस्तु पर लागू होता है। शक्तिहीन वस्तु में सृजन की क्षमता समाप्त प्रायः हो जाती है। ऐसी स्थिति में सभी धर्मों की मृतप्रायः, निरर्थक आराधना पद्धतियों का अन्तिम समय है।

प्रकृति निश्चित रूप से इस स्थान की पूर्ति के लिए निश्चित समय पर नई शक्ति को संसार के जीवों के कल्याण के लिए प्रकट करेगी। इस सम्बन्ध में महर्षि अरविन्द ने स्पष्ट इशारा कर दिया है। **उस परमसत्ता तक पहुँच कर उसका साक्षात्कार और प्रत्यक्षानभूति करना सम्भव है,** इस सम्बन्ध में जो पथ श्री अरविन्द ने दिखाया है, उसके अलावा कोई रास्ता है ही नहीं।

बहिर्मुखी आराधना से असंख्य जन्मों में भी उस परम सत्ता तक पहुँचना सम्भव नहीं है।

संदर्भ-सिद्धयोग पुस्तक पृष्ठ- 131

ब्रह्माजी के थैले...समझो सद्गुरु के चेले !

"आप सुधरे जगत् सुधरा" इस उक्ति के अनुसार सद्गुरुदेव सियाग की आराधना कर अपने स्वयं में अद्भुत परिवर्तन लाना होगा ताकि दुनिया आपसे प्रेरणा ले सकें। वर्तमान में कई व्यक्ति दूसरों की आलोचना में इतने डूब जाते हैं कि फिर वापस लौटने की स्थिति ही नहीं होती है। अपने जीवन की विकारित वृत्तियों के रूपान्तरण के लिए निष्कपट भाव से, श्रद्धापूर्वक सद्गुरुदेव की आज्ञा का पालन करते हुए, सघन मंत्र जप व नियमित ध्यान ही एक मात्र पथ है।

सद्गुरुदेव सियाग के अनुसार-"विश्व शांति के लिए सभी बहिर्मुखी बौद्धिक प्रयास असफल हो चुके हैं, क्योंकि शांति अंदर से आती है; **शांति का संबंध दिल से है। अतः 'अन्तर्मुखी आराधना'** द्वारा उस परमसत्ता से जुड़े बिना, शांति असंभव है।"

एक लोक कथा के अनुसार सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा जी ने सृष्टि में जीवों की उत्पति के परीक्षण में अपनी सर्वोच्च कृति मानव का सृजन किया। विज्ञान भी मानता है कि मानव का क्रमिक विकास हुआ है। जब मानव इस पृथ्वी पर आया तो ब्रह्माजी ने उसको दो थैले दिये और निर्देश दिया कि एक थैला आगे टाँगना और एक को पीठ के पीछे।

मानव की जिज्ञासा हुई कि इनमें क्या है? ब्रह्मा जी ने कहा कि इन दो थैलों में विकार, गलतियाँ, दोष आदि भर रखे हैं। एक थैले में जागतिक दोष अर्थात् जगत् के दोष हैं, पराये के दोष हैं और दूसरे एक थैले में स्वयं के दोष है। मानव के स्वयं के दोष वाले थैले को आगे टाँगना है और हमेंशा अपने दोषों को देखकर, अपने में सुधार करना है। जगत् के दोष वाले थैले को पीछे टाँगना है।

जब मनुष्य अपनी विकृतियों, दोषों व गलतियों को स्वीकार कर, सुधार करता जाएगा तो पीछे वाला थैला अर्थात् जगत् में स्वतः ही परिवर्तन आता जाएगा। एक एक मनुष्य मिलकर ही तो अरबों लोगों की दुनिया बनी है। **जब एक में परिवर्तन आएगा तो पूरी दुनिया में परिवर्तन आएगा।**

मानव जब पृथ्वी पर आया तो उसने दोनों ही थैलों को, एक आगे और एक पीछे लगा दिया। लेकिन गलती यह हुई कि जैसा ब्रह्माजी ने कहा था वैसा नहीं किया। उसने जागतिक दोषों वाला थैला आगे लगा दिया और स्वयं

के दोषों वाला थैला पीछे लगा दिया।

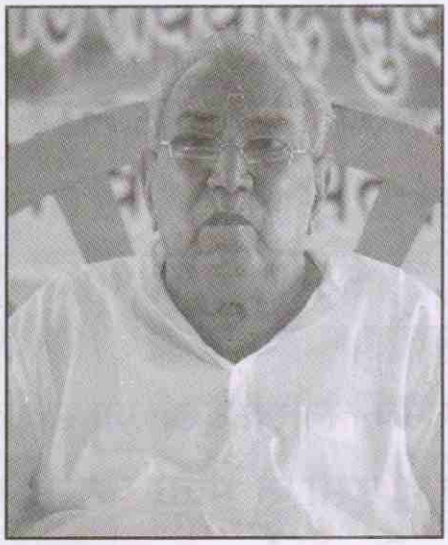

उसका परिणाम क्या हुआ जो दुनिया के सामने है। आज मोटे तौर से देखा जाए तो बहुत ही कम व्यक्ति होंगे जो ब्रह्मा जी के कहे अनुसार थैलों का क्रम लगाया हुआ है। आज पूरी दुनिया की यही स्थित है। स्वयं क्या कर रहा है? इसका कोई भान नहीं, खुद के पैरों में आग लगी है, उसको नहीं देख रहा है लेकिन डूँगर(पहाड़)पर दीपक जल रहा है वो दीखता है। पूरी विश्व मानव जाति की कमोबेश यही स्थिति है।

एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की आलोचना करता है, एक जाति दूसरी जाति की आलोचना करती है और कहती है कि देखो अमुक जाति में यह दोष है। समुदाय दूसरे समुदाय की, एक धर्म दूसरे धर्म की, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की आलोचना कर रहा है। इस कारण पूरी दुनिया अशांत और दुःखी हैं।

महाशक्तिशाली देशों की मानसिकता को ही लीजिए। अपनी रक्षा के लिए विश्व शांति की बात कहकर परीक्षण पर परीक्षण किये जा रहे हैं। कभी परमाणु बम्ब, कभी हाइड्रोजन बम्ब, जैविक बम्ब, कुछ ही क्षणों में एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँचने वाली घातक मिसाइलों का परीक्षण कर रहे हैं और पूरी दुनिया पर दबदबा बनाये रखने के लिए दूसरे देशों को आँख दिखाते हैं। खबरदार किसी ने कोई परीक्षण किया तो दुनिया खतरे में पड़ जाएगी।

विश्व शांति के नाम से 5-7 देशों ने अथाह भीषण बारूद और हथियार

शेष पृष्ठ 37 पर....

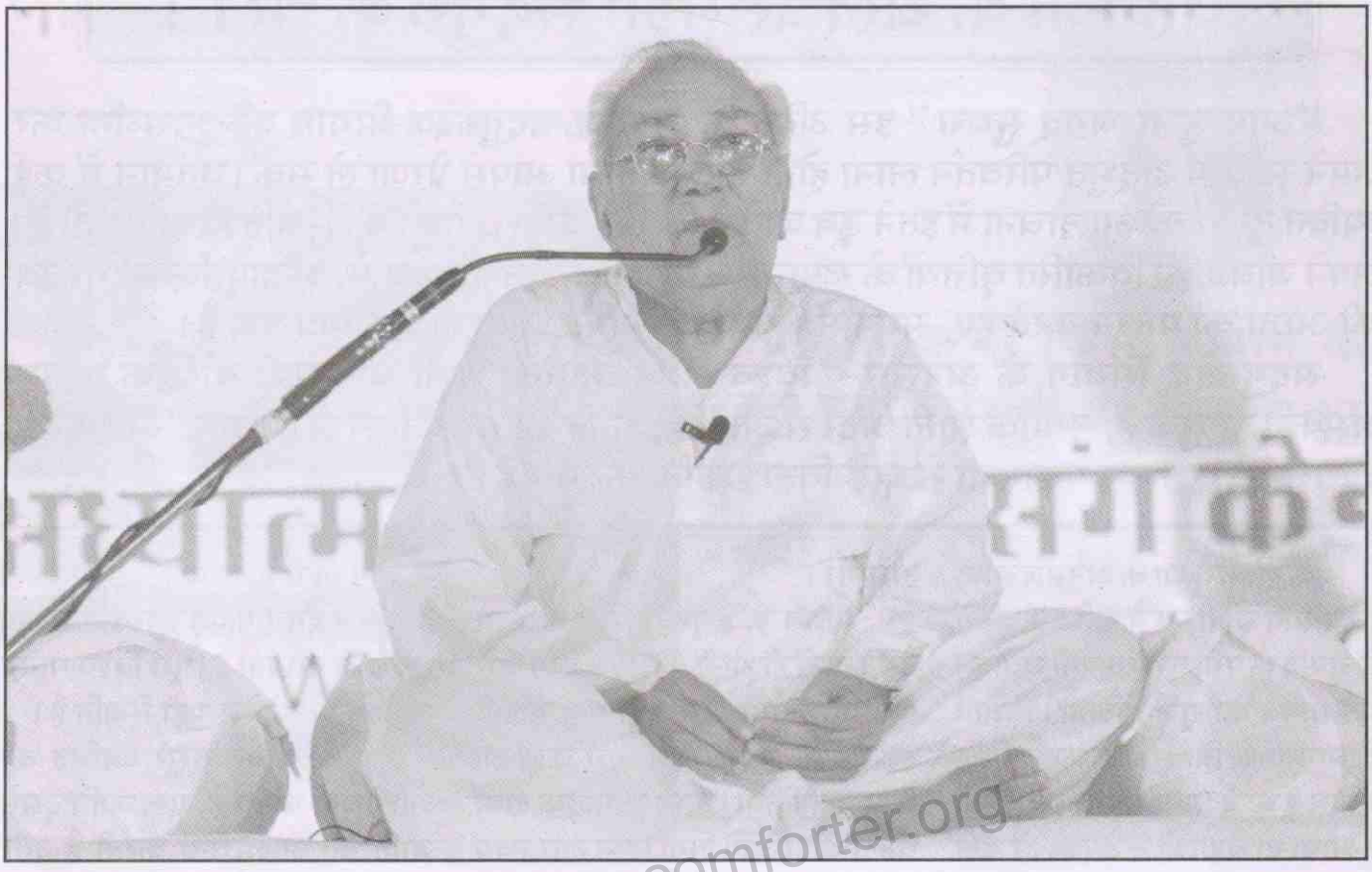

www.the-comforter.org

भगवान् मनुष्य रूप में अवतार क्यों लेते हैं ?

समस्त मानव जाति के सामने अपने दिव्य स्वरूप को पूर्णरूप से प्रकट करने के लिए, वे नरदेह धारण करते हैं। नरदेह के भीतर से ही उनकी वाणी सुनी जा सकती है, उनकी लीला देखी जा सकती है। नरदेह के भीतर ही उनका लीलाविलास होता है, इसी के भीतर वे रसास्वादन करते हैं।

साधु-भक्तों में उनका थोड़ा-थोड़ा प्रकाश रहता है, जैसे फूल को चूसते चूसते थोड़ासा मधु मिलता है। अवतार सर्व समर्थ और परब्रह्म का नरदेह में अवतरण होता है।

-श्री रामकृष्ण परमहंस

समर्थ सद्गुरुदेव

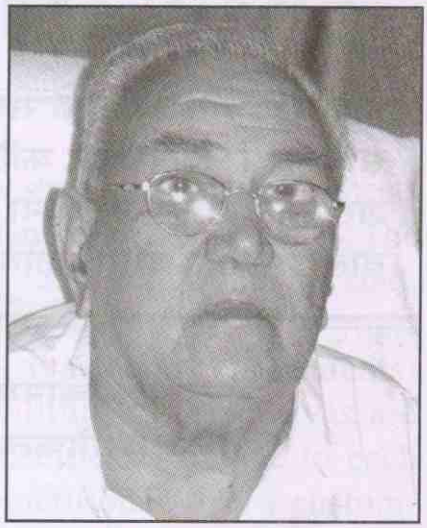

"इस प्रकार शांत, स्थिर और निर्भय, वह प्राणी अपना ही नहीं, संसार के अनके जीवों का कल्याण करता हुआ, अपने परम लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है। यह होता है आध्यात्मिक संत सद्गुरुदेव की कृपा का प्रभाव। ऐसा संत पुरुष जो मनुष्यों को द्विज बनाने की स्थिति में पहुँच जाता है, गुरु कहलाने का अधिकारी होता है।

गुरु पद कोई खरीदी जाने वाली वस्तु नहीं है। यह पद न किसी जाति विशेष में जन्म लेने से प्राप्त होता है, न कपड़े रंग कर स्वांग रचने से, न किसी शास्त्र के अध्ययन से, यह तो मन रंगने की बात है।

ईश्वर करोड़ों सूर्यों से भी अधिक ऊर्जा का पुँज है, ऐसी परमसत्ता से जुड़ने के कारण, गुरु पारस बन जाता है। अतः जो मनुष्य इस पारस के संपर्क में आता है, सोना बन जाता है।"

-समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

www.the-comforter.org

"नाम जप ही इस आराधना में आगे बढ़ने का ठोस आधार है।"

-समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग

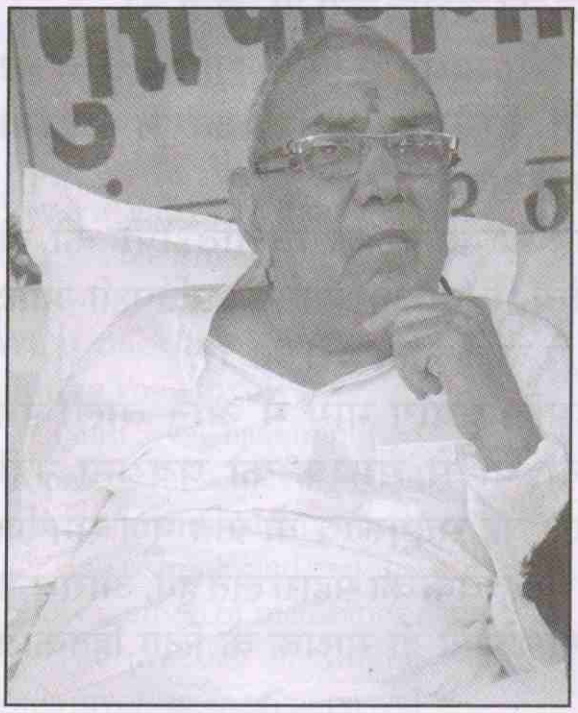

उद्यमशीलता

घड़े में पानी भरकर छीके पर टाँग दो तो कुछ ही दिनों में पानी सूख जाता है; परन्तु घड़े को यदि गंगा में डुबाए रखो तो पानी कभी नहीं सूखता।

इसी भाँति जो एक-दो दिन प्रेम-भक्ति करके ही निश्चिन्त रहता है उसकी भक्ति दो दिन में छीके पर टँगे घड़े के पानी की तरह सूख जाती है।

परन्तु जो ईश्वर के प्रेम में नित्य डूबा रहता है, उसकी प्रेम-भक्ति कभी नहीं सूखती।

-श्री रामकृष्ण परमहंस

इसलिए कोई भी साधक आराधना को ढीला नहीं छोड़ें। सघन नाम जप व नियमित ध्यान जरूरी है।

साधकों क लिए विशेषः-

पातंजलि योग दर्शन के समाधिपाद के 30 वें सूत्र में सविस्तार वर्णन है कि आराधनाशील साधक को किन किन कठिनाईयों से गुजरना पड़ता है? लेकिन जो साधक सद्गुरुदेव के शरणागत होकर आराधना (सघन नाम जप व नियमित ध्यान) में तल्लीन रहता है, आने वाली कठिनाईयों से हतोत्साहित नहीं होता है, वह विघ्नों को जीत लेता है।

व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रान्तिदर्शना
लब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः।। 30।।

व्याधि,स्त्यान,संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति,भ्रान्तिदर्शन, अलब्धभूमिकत्व और अनवस्थितत्व--ये नौ; (जो कि) चित्तविक्षेपाःचितके विक्षेप हैं;

व्याख्या-योगसाधन में लगे हुए साधक के चित्त में विक्षेप उत्पन्न करके उसको साधन से विचलित करनेवाले ये नौ योगमार्ग के विघ्न माने गये हैं।

1. शरीर, इन्द्रियसमुदाय और चित्तमें किसी प्रकार का रोग उत्पन्न हो जाना '**व्याधि**' है।

2. अकर्मण्यता अर्थात् साधनों में प्रवृति न होने का स्वभाव '**स्त्यान**' है।

3. अपनी शक्ति में योग के फल में संदेह हो जाने का नाम '**संशय**' है।

4. योगसाधनों के अनुष्ठान की अवलेहना (बे-परवाही) करते रहना '**प्रमाद**' है।

5. तमोगुण की अधिकता से चित्त और शरीर में भारीपन हो जाना और उसके कारण साधन में प्रवृति का न होना '**आलस्य**' है।

6. विषयों के साथ इन्द्रियों का संयोग होने से उनमें आसक्ति हो जाने के कारण जो चित्त में वैराग्य का अभाव हो जाता है, उसे '**अविरति**' कहते है।

7. योग के साधनों को किसी कारण से विपरीत समझना अर्थात् यह साधन ठीक नहीं, ऐसा मिथ्या ज्ञान हो जाना '**भ्रान्तिदर्शन**' है।

8. साधन करने पर भी योग की भूमिकाओं का अर्थात् साधन की स्थिति प्राप्त न होना-यह '**अलब्धभूमिकत्व**' है; इससे साधक का उत्साह कम हो जाता है।

9. योगसाधन से किसी भूमि में चित्त की स्थिति होनेपर भी उसका न ठहरना '**अनवस्थितत्व**' है।

इन नौ प्रकार के चित्तविक्षेपों को ही अन्तराय, विघ्न और योग के प्रतिपक्षी आदि नामों से कहा जाता है।। 30 ।।

इसलिए योग मार्ग में आने वाली इन कठिनाईयों से साधक को घबराना नहीं चाहिए। वह सद्गुरुदेव के प्रति पूर्ण समर्पण द्वारा, सद्विवेक का सहारा लेते हुए, आराधना में लगा रहे, ये ही साधक के लिए हितकारी है।

❖❖❖

www.the-comforter.org

Religious Revolution in the World

INTRODUCTION TO SIDDHA YOGA

What does Yoga mean?

Yoga means a union of the soul with God or the universal consciousness force. In modern times, Yoga is erroneously associated with physical exercise. Sadhana (Spiritual Practice) includes meditation and mantra chanting which finally brings into the state of Yoga.

What is Siddha Yoga?

The word 'Siddha' means that which is empowered. Guru Ramlal Ji Siyag, through years of austerity and sadhana (concentration and practice) has become the master of Siddhis (powers) that make him a Siddha Guru. As a Siddha Guru, Guru Siyag has the power to enlighten those who seek his blessings.

What does the practice of Siddha Yoga involve?

Guru Siyag has simplified the process of achieving good health and enlightenment by devising a simple and easy-to-follow method of meditation.

The practice of Siddha Yoga involves: meditation and chanting of a divine mantra given by Guru Siyag during a Diksha (initiation) program.

Meditation before being initiated

Those who haven't received Diksha from Guru Siyag can practice meditation by concentrating on Gurudev's photograph and chanting silently any mantra or holy or spiritual word such as "Om", "Shiv", "Guru", "Allah", "Krishna", "Jesus" etc. Read in detail about the method of meditation on Guru Siyag's vet **www.the-comforter.org.** The meditation is to be done for 15 minutes at Morning and Evening any seated position.

Meditation after being initiated

Guru Siyag initiates a seeker as his disciple by giving him/her a mantra — a divine word — to chant silently. Daily meditation is to be accompanied by chanting of the mantra. The mantra is to be chanted even when not meditating, preferably throughout the day.

Impact of meditation

During meditation, many practitioners experience yogic postures and body movements happening automatically. The practitioner can neither start, stop nor control these yogic Kriyas (body movements) willfully. These Kriyas are specifically unique to each practitioner like a custom-made program.

This is because the divine force that is at work here through Guru Siyag's spiritual powers knows exactly which specific posture the **practitioner** needs to undergo to rid himself of body and mental ailments, and to progress on the spiritual path.

The yogic postures under Siddha Yoga are therefore not standardized nor are they orchestrated willfully like those in a conventional yoga school. An observer watching people meditate is often astonished to notice that almost each participant undergoes different yogic postures. Most practitioners also experience a sense of exhilaration and joy during meditation that they had never experienced before.ending cycle.

❖❖❖

Count. to Next Edition

गतांक से आगे...

"हृदय मंथन"

मैंने कहा, "यह चित्त प्रभाव भी क्या राग-द्वेष का ही रूप है?" बोले, "राग-द्वेष तो है ही। अब तुम्हें इस पुलिया से राग हो गया तो इसके जाने पर चिन्तित हो उठे। जिससे हमें द्वेष होता है, वह हो जाए, या सामने आ जाए तो हम विचलित हो जाते हैं।

राग-द्वेष केवल व्यक्तियों से ही नहीं होता अपितु पूजा पद्धति, जीवन शैली, चिन्तन शैली, मान-सम्मान आदि सबसे होता है। हम चाहते हैं कि हमारी ही बात मानी जाए, अथवा अमुक व्यक्ति की बात न मानी जाए, नहीं तो दुःखी हो जाते हैं। कुछ कर रहे हैं तो छोड़ने का मन नहीं होता। कुछ नहीं कर रहे तो कुछ करने का मन नहीं होता। यह सभी राग-द्वेष हैं।"

इस पर मैंने कहा, **"इसका अर्थ यह हुआ कि राग-द्वेष हमारे अन्दर बहुत गहरा बैठा है। हर क्षेत्र तथा हर पल में, हमें नचाता रहता है। कभी प्रसन्नता या अभिमान उदय करके, कभी हृदय को व्यथित कर के।"** बोले, "ऐसा ही है। हम जानते ही नहीं कि कब-कब, कहाँ-कहाँ तथा कैसे-कैसे हम राग-द्वेष के हाथों खेल रहे हैं।

यदि सच पूछा जाए तो दिन का अधिकांश समय हम राग-द्वेष के प्रभाव में ही व्यतीत करते हैं। इसीलिए तो सुखी-दुःखी अथवा सम्मानित, अपमानित अनुभव करते रहते हैं। ऐसे ही राग-द्वेष भी हमारे अन्तर को चाटता जा रहा है। जब तक इससे छुटकारा प्राप्त होकर, हम स्वाभाविक अवस्था में नहीं आ जाते, तब तक कर्त्तव्य कर्म का अभ्यास ही कर्त्तव्य है।"

अब याद नहीं कि उन दिनों क्या लिख रहा था? दिन भर तो आश्रम का काम रहता था, आराम के समय में से ही समय निकालता था। काम करते समय भी प्रायः लिखो जाने वाले विषय से संबंधित विचार ही अन्तर में घूमते रहते थे। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, महाराजश्री के सिरहाने पानी का एक लोटा तथा गिलास रखा रहता था।

एक दिन कुछ ऐसा प्रसंग बना कि मैं लोटा माँजना, पानी भरना, सब कुछ भूल गया। दोपहर में भी आराम के समय, लिखने में ही व्यस्त रहा, पानी की याद आई ही नहीं। महाराजश्री के आराम से उठते ही, मैं उनके कमरे में जाया करता था। उस दिन लिखने की व्यस्तता में उसमें भी देरी हो गई।

जब मैं महाराजश्री के कमरे में गया तो देखा, अपने आसन पर शान्त-मौन बैठे थे। देखकर बोले, "अरे भई, आज लोटे में पानी ही नहीं था, कब का प्यासा बैठा हूँ, पर अब हमारे ब्रह्मचारी जी तो लेखक हो गए हैं, उन्हें लिखने से ही फुरसत नहीं। चलो हमारा क्या है, जैसे-तैसे समय कट ही जाएगा।"

सुनकर मैं शर्म से गड़ गया। मुँह पर जैसे किसी ने पट्टी बाँध दी हो। बोलूँ भी तो क्या? मेरी भूल का कोई स्पष्टीकरण भी तो नहीं था। फिर भी मैं, झिझकते-झिझकते बोला, "महाराज जी याद नहीं रहा, भूल गया था।" मैं तेजी से बाहर निकला, पानी का गिलास लाकर पेश किया।

अब मैं मंदिर के बाहर, सिर पर हाथ रखे बैठा सोच रहा था, **'मेरी इस लिखने की आदत के कारण ही आज की अप्रिय घटना घटी।'** न मैं लिखने में व्यस्त रहता, न ही भूलता। मेरे गुरुजी आज प्यासे बैठे रहे और मैं लिखता रहा। ऐसे लिखने से भी भला क्या लाभ!" मैं बार-बार लिखने को कोसता हुआ, वहाँ से चला।

महाराजश्री तब तक बाहर आ कर वराण्डे में, कुर्सी पर विराज चुके थे। मैंने प्रणाम किया तथा इस प्रकार निवेदन किया, "महाराज जी, आज मुझसे बड़ी भूल हुई। यह भूल मेरे लिखने के कारण हुई। आज के पश्चात् मैंने लिखना छोड़ दिया है। भविष्य में भूल नहीं होगी। क्षमा माँगता हूँ।"

महाराजश्री हँस दिए, बोले, "यह भूल तुम्हारे लिखने के कारण नहीं हुई, लिखने में आसक्ति के कारण हुई, इसलिए आसक्ति त्याग दो, लिखना छोड़ने की आवश्यकता नहीं। मनुष्य किसी काम को बड़ा तथा किसी को छोटा समझता है। जो महत्त्व साधन करने का है, वही लोटे में पानी भरने का, कुटिया साफ करने का या कपड़े धोने का भी है।

जब जो काम करना कर्त्तव्य हो, उस समय वही बड़ा है। अर्थात् काम बड़ा नहीं, कर्त्तव्य बड़ा है। तुमने लिखने के काम को महत्त्वपूर्ण मान लिया और आसक्त हो गए। लोटे में पानी भरने के काम को महत्त्वहीन समझा और भूल गए। बस यही तुम से गलती हो गई। इस में लिखने के काम का कोई दोष नहीं।

संदर्भ-स्वामी शिवोमतीर्थ
'हृदय मंथन-1

क्रमशः अगले अंक में...

गतांक से आगे...

योगियों की आत्मकथा

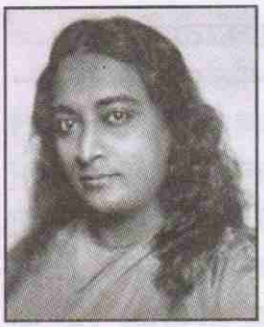

-परमहंस श्री योगानंद

"इस संसार में हर वस्तु की एक विशेष ऋतु और हर काम का एक समय होता है।"

अपने मन को सांत्वना देने के लिये सोलोमन का यह ज्ञान उस समय मुझे प्राप्त नहीं था; घर से बाहर जहाँ कहीं भी मैं घूमने जाता, मेरी आँखें अपने इर्दगिर्द मेरे लिये नियत 'गुरु' को ढूँढ़ती रहती। परन्तु मेरी हाई स्कूल की पढ़ाई पूर्ण होने तक मेरी उनसे भेंट न हो सकी।

अमर के साथ हिमालय की ओर **पलायन** और श्रीयुक्तेश्वरजी के मेरे जीवन में आगमन के महान् दिवस के बीच दो वर्ष व्यतीत हो गये। इस बीच मैं अनेक साधु संतों से मिला--"गंधबाबा", "बाघस्वामी", नागेन्द्रनाथ, भादुड़ी, मास्टर महाशय, और विश्वविख्यात बंगाली वैज्ञानिक जगदीशचन्द्र बोस।

गंधबाबा के साथ मेरी भेंट की दो भूमिकाएँ थीं; इनमें से एक सामंजस्यपूर्ण थी और दूसरी विनोदपूर्ण।

"ईश्वर सरल है। अन्य सब कुछ जटिल है। प्रकृति के सापेक्ष जगत् में निरपेक्ष मूल्यों की आशा मत करो।"

जब मैं मन्दिर में काली माता की मूर्ति के सामने मौन खड़ा था, तब यह दार्शनिक निष्कर्ष कोमल स्वर में मेरे कानों में प्रविष्ट हुआ। पलटकर मैंने देखा तो मेरे समक्ष एक लम्बे कद का व्यक्ति खड़ा था जिसके कपड़ों से, या उनके हावभाव से, ऐसा लगता था कि वह कोई परिव्राजक साधु था।

"आपने सचमुच मेरे विचारों के संभ्रम को जान लिया!" मैं कृतज्ञतापूर्वक मुस्कराया। "प्रकृति के कल्याणकर और भयंकर रूपों की उलझन ने, जिनका प्रतीक काली है, मुझसे अधिक बुद्धिमान लोगों को भी असमंजस में डाल दिया है।"

"बहुत ही कम लोग उसके रहस्य का भेद पाते हैं! अच्छा और बुरा तो प्रत्येक मनुष्य की बुद्धि को चुनौती देनेवाली वह पहेली है जिसे जीवन ने उनके सामने एक स्फिंक्स की भाँति रख दिया है। इस पहेली को सुलझाने का कोई प्रयास भी किये बिना अधिकांश लोग अपनी मृत्यु के रूप में, इसका दंड भर देते हैं। यह दंड आज भी उतना ही लागू होता है जितना थीबस के दिनों में था। कभी-कभार एकाध अत्यन्त उच्च व्यक्तित्व पराजय अस्वीकार कर देता है। द्वैत की माया से वह अद्वैत का अविभाजित सत्य खींच लेता है।"

"आप के शब्दों में दृढ़ विश्वास दिखता है, महाराज!"

ज्ञानप्राप्ति के तीव्र दुःखदायी मार्ग, अर्थात् सत्यनिष्ठ आत्मपरीक्षण का मैंने दीर्घकाल तक अभ्यास किया है। आत्मपरीक्षण या अपने विचारों पर निरन्तर **निर्मम दृष्टि** रखाना, एक कठोर और झकझोरने वाला अनुभव है। यह बलवान से बलवान अंहकार को भी चूर-चूर कर देता है। परन्तु सच्चा आत्मविश्लेषण गणित के नियमों की भाँति सिद्ध पुरुष उत्पन्न करने का कार्य करता है। अपने विचारों से अति प्रेम एवं व्यक्तिगत मान्यताओ में दृढ़ता का मार्ग अहंकारियों का निर्माण करता है, जो ईश्वर और सृष्टि की अपने ढंग से व्याख्या करना, अपना अधिकार समझते हैं।"

"ऐसी अहंकारयुक्त मौलिकता के सामने तो सत्य निश्चित ही विनम्रतापूर्वक पीछे हट जाता है," मैंने कहा। मुझे इस चर्चा में आनंद आ रहा था।

"मनुष्य जब तक अपने दुराग्रहों से मुक्त नहीं हो जाता, तब तक वह किसी शाश्वत सत्य को नहीं समझ सकता। शताब्दियों से जमा हो रहे कीचड़ में सना मानवी मन असंख्य सांसारिक मायाभ्रमों से व्याप्त घृणाजनक जीवन से भरपूर है। यहाँ युद्धक्षेत्र की भीषण लड़ाई भी फीकी पड़ जाती है, जब मनुष्य पहली बार अपने अन्तःशत्रुओं का विरोध करता है। ये कोई साधरण मरने वाले शत्रु नहीं हैं, जिन्हें सुसज्जित सेनाओं की सहायता से काबू में किया जा सके। विषाक्त प्राणघातक अस्त्रों से सुसज्जित ये सर्वव्यापी, अविराम कार्य करनेवाले अन्ध वासनाओं के सिपाही मनुष्य का नींद में भी पीछा करते हुए हम सब को धराशायी कर देने का अवसर खोजते रहते हैं। विचारहीन है वह मनुष्य जो सर्वसामान्य नियति के आगे आत्मसमर्पण कर अपने आदर्शों का गला घोंट देता है। क्या उसे नपुंसक, निष्प्राण, मानवजाति पर कलंक के अतिरिक्त और कुछ कहा जा सकता है?"

❖❖❖

क्रमशः अगले अंक में...

www.the-comforter.org

विरोधी शक्तियों का प्रतिरोध

यह सर्व विदित है कि विरोधी आसुरिक शक्तियाँ निम्नतर प्रकृति की क्रियाओं का लाभ उठाती हैं और उनके द्वारा सिद्धि को बिगाड़ने, नष्टभ्रष्ट करने या उसमें विलम्ब कराने की चेष्टा करती हैं।

यह ऐसा तथ्य है जिसे आदिकाल से भारत की तरह युरोप और अफ्रिका के सभी योगी और गुह्यविद् भी जानते हैं कि जहाँ कभी योग या यज्ञ प्रारम्भ किया जाता है वहाँ विरोधी आसुरिक शक्तियाँ किसी भी साधन द्वारा उसे रोकने के लिये आ जुटती हैं।

यह भी प्रसिद्ध है कि एक निम्न प्रकृति है और एक उच्चतर आध्यात्मिक प्रकृति--यह भी सब जानते हैं कि वे परस्पर भिन्न दिशाओं में खींचती हैं और पहले-पहल निम्नतर प्रकृति प्रबलतम होती है और बाद में उच्चतर प्रकृति।

यह सर्व विदित है कि विरोधी आसुरिक शक्तियाँ निम्नतर प्रकृति की क्रियाओं का लाभ उठाती हैं और उनके द्वारा सिद्धि को बिगाड़ने, नष्टभ्रष्ट करने या उसमें विलम्ब कराने की चेष्टा करती हैं। यह उपनिषद युग जैसे पुराने काल से कहा जाता रहा है (क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्); आगे जाकर ईसा मसीह ने भी यही कहा था ''जिस रास्ते और द्वार से होकर भगवान् के राज्य में प्रवेश करता है-वह कठिन और तंग है और यह भी कि ''पुकार बहुतों की होती हैं, पर चुने विरले ही जाते हैं''

इन सबका कारण ये कठिनाइयाँ ही हैं। किन्तु यह भी हमेशा सर्व विदित रहा है कि जो लोग हृदय से सच्चे और निष्ठावान् हैं और ऐसे ही बने रहते हैं तथा जो भगवान् पर भरोसा रखते हैं, वे सब कठिनाइयों, ठोकरों या पतनों के बावजूद लक्ष्य को प्राप्त कर लेते हैं।

सामान्य मानव-त्रुटियाँ का होना एक बात है-- वे अविद्यामय निम्न प्रकृति की क्रिया है। पर विरोधी शक्तियों की क्रिया एक ऐसा विशेष हस्तक्षेप है जो उग्र अन्तः संघर्षों को, असामान्य अवसादों को, इस प्रकार के विचार और प्रवृत्तियों को उत्पन्न करता है, जिन्हें ऐसे सुझावों के रूप में आसानी से पहचाना जा सकता है- जैसे आश्रम चले आना, योग-साधना छोड़ देना, भगवान् के विरुद्ध विद्रोह करना, असाध्य प्रतीत होने वाली विपत्ति और विनाश के सुझाव, बुद्धिहीन आवेग आदि-आदि। यह सर्व सामान्य मानव निर्बलताओं से भिन्न कोटि की चीजें हैं।

मनुष्यों में निम्न प्रकृति का सामान्य प्रतिरोध और विरोधी सत्ताओं की क्रिया, ये दो बिल्कुल भिन्न चीजें हैं। पहली स्वाभाविक क्रिया है और सबमें होती है; पिछली क्रिया एक ऐसा हस्तक्षेप है जो मानवेतर लोक से होता है।

किन्तु यह हस्तक्षेप दो रूपों से हो सकता है (1) विरोधी सत्ताएँ निम्न प्रकृति की शक्तियों का उपयोग करती है और उन पर दबाव डालकर उनसे प्रतिरोध करवाती हैं अन्यथा वे शान्त पड़ी रहें, प्रतिरोध को प्रबल या उग्र बनाती हैं अन्यथा वह प्रतिरोध हलका और मंद हो, प्रतिरोध के उग्र होनेपर उसकी उग्रता को और भी बढ़ा देती हैं इसके सिवाय जब विरोधी सत्ताएँ इन शक्तियों पर क्रिया करती हैं तो उनमें एक अनिष्टकारी चतुराई, एक सचेतन योजना और संगठन होता है जो शक्तियों के सामान्य प्रतिरोध में प्रत्यक्ष नहीं होता। (2) वे कभी-कभी अपनी शक्तियों द्वारा आक्रमण करती हैं।

जब ऐसा होता है तो व्यक्ति प्रायः उससे अल्पकाल के लिये अभिभूत हो जाता है या कम-से-कम उस पर एक ऐसा दुर्निवार प्रभाव छा जाता है जो उसके विचारों, वेदनों और कार्यों को असाधारण बना देता है-- मस्तिष्क पर काला परदा छा जाता है, प्राण में तूफान आ जाता है, सब कुछ इस तरह से कार्य करता है मानो व्यक्ति लाचार हो गया हो और अभिभूत करनेवाली शक्तियों द्वारा घसीटा जा रहा हो।

दूसरी तरफ यह हो सकता है कि उससे अभिभूत होने के स्थान पर केवल व्यक्ति पर उसका कोई प्रबल प्रभाव ही हो; तब लक्षण कम स्पष्ट होते हैं, किन्तु जो इन शक्तियों के तौर-तरीकों से परिचित हैं उसके लिये व्याधि को देख लेना आसान होता है। अन्त में यह भी हो सकता है कि व्यक्ति उससे आक्रान्त ही हो, अधिकृत या प्रभावित नहीं। जब व्यक्ति उससे पृथक् रहता है तो उससे पराभूत नहीं होता और प्रतिरोध करता है।

ऐसे भी कुछ लोग हैं जिन्हें विरोधी शक्तियाँ कभी स्पर्श नहीं करती।

संदर्भ-अरविन्द के पत्र भाग-3

क्रमशः अगले अंक में...

www.the-comforter.org

''योग के आधार''

स्थिरता, शांति व समता

-श्री अरविन्द

विशालता और स्थिरता यौगिक चेतना की नींव हैं और आंतरिक उन्नति और अनुभूति के लिये सबसे उत्तम अवस्था है। अगर भौतिक चेतना में एक ऐसी विशाल स्थिरता स्थापित की जाये जो शरीर और उसके समस्त अणु-परमाणु तक को अधिकृत कर ले और भर दे तो वह उसके रूपांतर का आधार बन सकती है। **वास्तव में इस विशालता और स्थिरता के बिना रूपांतर का होना असंभव-सा ही है।**

साधना का यह उद्देश्य ही है कि चेतना शरीर से बाहर निकल कर ऊपर उठे और ऊपर ही अपना आसन ग्रहण करे-सर्वत्र अपने आपको फैला दे, शरीर में ही आबद्ध न रहे। इस तरह मुक्त होकर, इस स्थिति से ऊपर, साधारण मन से ऊपर जो कुछ है, उसकी ओर साधक अपने-आपको खोलता है, जो कुछ **ऊर्ध्व लोकों** से वहाँ उतरता है, उसे ग्रहण करता है और जो कुछ उस स्थान से नीचे है, उसका वहीं से निरीक्षण करता है। इसी तरह पूर्ण मुक्त होकर साक्षी के रूप में नीचे की सभी वस्तुओं को देखना और उनका नियंत्रण करना और जो कुछ ऊपर से अवतरित होता है और शरीर में प्रवेश करना चाहता है उसके लिये एक पात्र या प्रणाली बनना संभव होता है और यही चीज शरीर को एक उच्चतर चेतना और प्रकृति के अंदर पुनः गठित करके एक महत्तर अभिव्यक्ति का यंत्र बनने के लिये तैयार करती है।

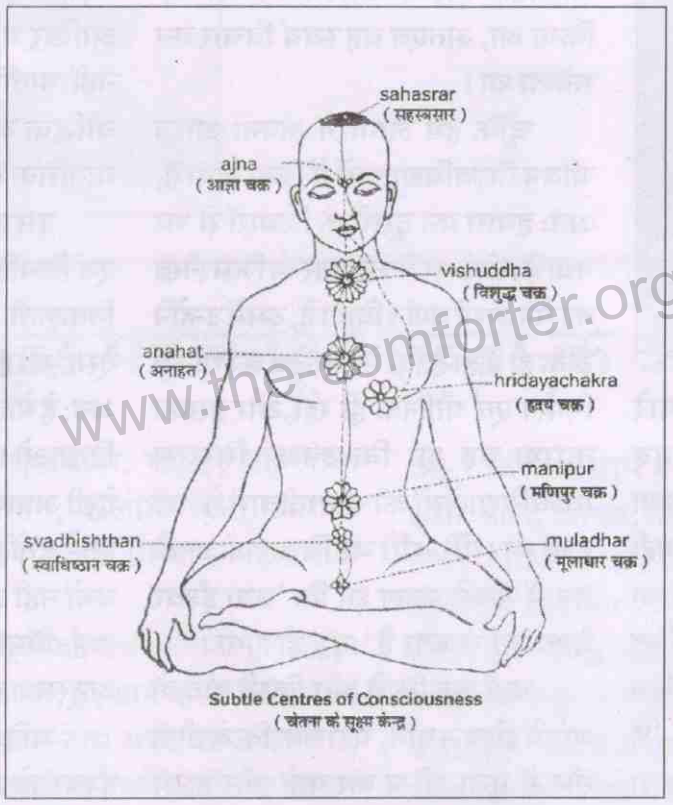

Subtle Centres of Consciousness
(चेतना के सूक्ष्म केन्द्र)

www.the-comforter.org

तुम्हारे अंदर जो कुछ हो रहा है, वह यह है कि तुम्हारी चेतना इसी **मुक्तावस्था** में अपने-आपको प्रतिष्ठित करने की चेष्टा कर रही है। जब साधक इस **ऊर्ध्वतर** स्थिति में पहुँच जाता है, तब उसे आत्मा की स्वतंत्रता, विशाल **निश्चल-नीरवता** और अविचल स्थिरता प्राप्त हो जाती है। परंतु इस स्थिरता को शरीर के अंदर, सभी निम्न स्तरों के अंदर भी, उतार लाना होगा और वहाँ इसे इस प्रकार प्रतिष्ठित रहना होगा, मानो कोई वस्तु पीछे विद्यमान रहती हुई, सभी गतियों को धारण किये हुए हो।

अगर तुम्हारी चेतना सिर से ऊपर उठती है तो इसका मतलब यह है कि वह साधारण मन को अतिक्रम कर ऊपर के उस केंद्र में जाती है जो **उच्चतर चेतना** को ग्रहण करता है, अथवा वह स्वयं उच्चतर चेतना के क्रमोन्नत स्तरों की ओर जाती है। इसका प्रथम परिणाम है आत्मा की **निश्चल-नीरवता** और शांति की प्राप्ति जो उच्चतर चेतना का आधार है।

यह **निश्चल-नीरवता** और शांति पीछे निम्नतर स्तरों में, यहाँ तक कि शरीर में भी अवतरित हो सकती है। इसके बाद ज्योति भी उतर सकती है और शक्ति भी। नाभि-चक्र और उसके नीचे के जो चक्र हैं वे सब प्राप्य और शरीर **चेतना के चक्र** हैं; उनमें भी संभवतः उच्चतर शक्ति की कोई चीज अवतरित हुई होगी।

क्रमशः अगले अंक में...

गतांक से आगे....

!! मेरे गुरुदेव !!

-स्वामी विवेकानन्द

भारत में कोई धार्मिक ग्रन्थ ऐसा नहीं है, जिसमें ये भाव प्रमुख न हों। मनुष्य को ईश्वर-प्राप्ति करनी चाहिए, ईश्वर का अनुभव करना चाहिए, ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहिए तथा उससे बातचीत करनी चाहिए, यही धर्म है। भारत का वातावरण ऐसे साधु-सन्तों की कथाओं से परिपूर्ण है, जिन्हें ईश्वर का साक्षात्कार हुआ है।

प्रत्यक्ष अनुभव ही हमारे विश्वास को पर्वत के समान दृढ़ बना सकता है। और ऐसी ही मेरी तथा अन्य भारतवासियों की भावना है। यही भाव उस बालक के मन में समा गया और उसने अपनी सारी जीवन-शक्ति इसी भावना पर केन्द्रीभूत कर दी। दिन पर दिन वह रोता और कहता, 'हे जगन्माता ! क्या यह सत्य है कि तुम्हारा अस्तित्व है अथवा यह सब कविता ही है?

आनन्दमयी माता वास्तव में है या कवियों की केवल कपोल-कल्पना तथा भटके हुए लोगों का भ्रम ही है? हम यह देख चुके हैं कि जिसे हम शिक्षा कहते हैं अथवा जिन पुस्तकों को हम पढ़ते हैं, उन सबका ज्ञान इस बालक को नहीं था। इस बालक का मन सहज ही सरल एवं निष्पाप था। उसकी विचार-शैली भी बड़ी पवित्र थी और इसका कारण यह था कि दूसरे के विचारों की विज्ञप्ति न होने के कारण, उन विचारों का प्रभाव उसके मन पर नहीं पड़ा था। उसने विश्वविद्यालय में प्रवेश नहीं किया था, अतएव वह स्वयं विचार कर सकता था।

चूँकि हम लोगों ने अपना आधा जीवन विश्वविद्यालयों में बिता दिया है, अतः हमारा मन दूसरों के विचारों से भर गया है। प्रोफेसर मैक्समूलर के जिस लेख का मैंने अभी वर्णन किया है, उसमें उन्होंने ठीक ही कहा है कि मेरे गुरुदेव का मानस निर्मल एवं मौलिक ही रहा, और इसका कारण यह था कि उनका विकास विश्वविद्यालयों की चहारदीवारी में नहीं हुआ था। धीरे-धीरे यह विचार जो उनके मन में सबसे प्रबल था कि 'क्या ईश्वर देखा जा सकता है' दृढ़ हो गया।

यहाँ तक कि वे और किसी बात के बारे में सोच न पाते, यहाँ तक कि वे ठीक तौर से पूजा भी न कर पाते और उससे सम्बन्धित अनेक विधियों पर भी ध्यान न दे पाते। बहुधा वे जगन्माता की मूर्ति के सम्मुख नैवेद्य रखना भी भूल जाते थे और कभी-कभी वे घण्टों आरती ही उतारा करते थे तथा उसके अतिरिक्त अन्य सब कुछ उन्हें विस्मृत हो जाता था!

सारे समय यही एक विचार उनके मन में रहा करता था और वह था, 'हे माँ! क्या यह सत्य है कि तेरा अस्तित्व है? फिर बोलती क्यों नहीं तू? क्या तू मर गयी है? यहाँ पर शायद हममें से कुछ लोग यह स्मरण कर सकेंगे कि हमारे जीवन में कुछ ऐसे क्षण आते हैं, जब हम नीरस तर्क-वितर्क तथा पुस्तकों को पढ़ते-पढ़ते थक जाते हैं-- क्योंकि आखिर ये पुस्तकें हमें कुछ भी सिखा नहीं पातीं हैं? और इनका पढ़ना भी बौद्धिक अफीम खाने के समान केवल मानसिक व्यसन ही हो जाता है।

इस प्रकार इन सब बातों से थककर एवं विचलित हो हमारे हृदय से एक हूक निकलती है, 'क्या इस विश्व में कोई ऐसा नहीं है, जो हमें प्रकाश दिखा सके? अतः हे माता! यदि तुम हो तो मुझे प्रकाश दिखाओ। तुम बोलती क्यों नहीं? तुम ऐसी अप्राप्य क्यों बनती हो? तुम अपने इतने दूतों को क्यों भेजती हो और स्वयं क्यों नहीं आती? इस कलह-क्लेश एवं पक्ष-विपक्ष के संसार में, मैं किसका अनुसरण तथा विश्वास करूँ?

यदि तुम प्रत्येक स्त्री-पुरुष की ईश्वर हो तो तुम स्वयं अपने बच्चे से बोलने क्यों नहीं आती और क्यों नही देखती कि वह छटपटाता हुआ तुम्हारे दर्शन करने को उत्सुकतापूर्वक तैयार है या नहीं?' ऐसे विचार हम सभी के मन में उठते हैं, परन्तु कब?-- जब हमें तीव्र मानसिक क्लेश होता है! पर दूसरे ही क्षण हम उन्हें भूल जाते हैं, क्योंकि हमारे चारों ओर अनेक मोहरूपी जाल हैं।

संदर्भ-विवेकानंद वॉल्यूम-7

क्रमशः अगले अंक में...

www.the-comforter.org

सद्गुरुदेव से अन्तर्मन से जुड़ाव

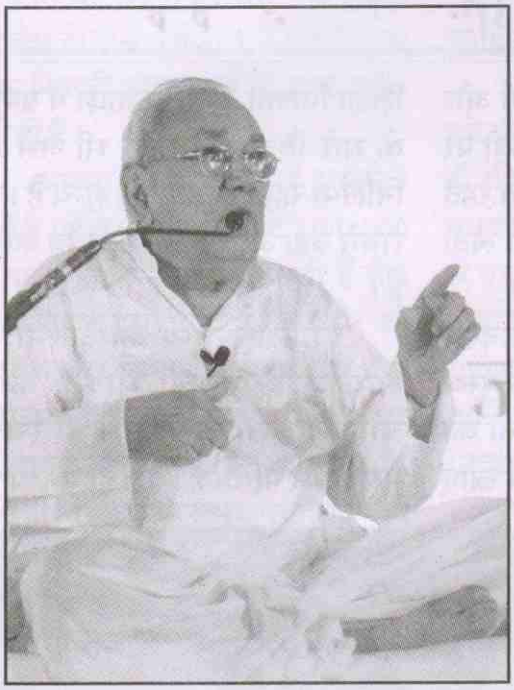

"आप मेरे से अन्तर्मन से जुड़ो, 'गुरु' आपके अन्दर बैठा है। वह आपको अंदर से हजार गुणा 'सही' (Correct) जवाब देगा।"

-समर्थ सद्गुरुदेव
श्री रामलाल जी सियाग

कुछ महत्त्वपूर्ण शब्दों के अर्थ-

www.the-comforter.org

प्रयाणः- प्रस्थान, यात्रा, युद्धयात्रा, चढ़ाई, यह लोक छोड़कर जाना, मृत्यु, देहत्याग, परलोक जाना, आरम्भ आदि, महान् आत्माओं का संसार से प्रस्थान-महाप्रयाण होता है।

प्रयतः-यमयुक्त, जिसने इंद्रियों को वश में किया हो, वशी।

प्रयागकालः- समय, मृत्युकाल, प्रस्थान करने का समय।

प्रयोगः-उदाहरण, दृष्टांत, साम-दाम आदि का अवलंबन, किसी सिद्धांत की सत्यता प्रमाणित करने या किसी अज्ञात बात का पता लगाने, जाँच करने आदि की दृष्टि से की गई प्रक्रिया या कार्य, योजना, साधन, पाठ, आरंभ, संबंध, अनुष्ठान,चलाना या छोड़ना।

प्रलयः-साहित्य में श्रृंगार रस के अन्तर्गत वह अवस्था जिसमें किसी विषय या बात में तन्मय होने के कारण तन-मन की सुधि नहीं रहती वह सात्विक अनुभवों के अंतर्गत माना गया, संसार का प्रकृति में लीन होकर मिट जाना, जो बहुत दिनों पर होता है और जिसके बाद फिर नई सृष्टि होती है, अब दुनिया फिर प्रलय की तरफ बढ़ रही है।

प्रलंबः-लटका हुआ, खीरा, चीड़, लटकने वाली, एक असुर जिसे बलराम ने मारा था, माला, स्तन, लटकता हुआ, ढाल, शाखा, गाथा, रँधा,लटकाव, सुस्त, अधिक लंबा, अधिक लंबा, अधरझूल, योग मार्ग में साधक की एक ऐसी अवस्था जिसमें उसका मन एक जगह स्थिर न होकर सब जगह भटकता रहता है, एक केन्द्र बिन्दु पर श्रद्धा का न होना, ऐसा साधक प्रलंबी कहलाता है।

प्रवर्तकः- नाटक में प्रस्ताव का वह भेद जिसमें सूत्रधार नाटक के समय का वर्णन करता है, काम में लगानेवाला, उकसानेवाला,प्रवृत करनेवाला, गति देने वाला, आविष्कार, किसी काम को चलानेवाला, सिद्धयोग के प्रवर्तक आदि।

प्रशमनः-स्थिर करना, शांति, शांत करना, नाश करना, वध, नष्ट करना, भारतीय सिद्धयोग दर्शन त्रिविध तापों (आदि-भौतिक, आदि-दैहिक व आदि-दैविक) का शमन करता है।

प्रशस्तिः-वह प्रशंसासूचक वाक्य जो पत्र के आदि में लिखा जाता है, पुष्पिका, सरनामा, प्रशंसा, तारीफ, बड़ाई, वर्णन आदि। ❖❖❖

कहानी...

परमानंद का अनुभव

एक बार धर्म के मर्मज्ञ राजा यदु ने एक अवधूत महात्मा को निर्भय विचरते हुए देखकर पूछा, ''महात्मन्! आप कोई कर्म तो करते नहीं, फिर यह अत्यन्त निर्मल बुद्धि आपको कैसे प्राप्त हुई, जिसके बल पर पूर्ण विद्वान होते हुए भी आप एक बालक के समान पृथ्वी पर विचरते हैं?

मनुष्य-आयु, यश, सौन्दर्य और धन सम्पत्ति की ही इच्छा से धर्म, अर्थ, काम, अथवा तत्त्व जिज्ञासा में प्रवृत्त होते हैं। अकारण कहीं किसी की प्रवृत्ति इनमें नहीं देखी जाती। पर मैं देख रहा हूँ कि कर्म करने में समर्थ विद्वान, निपुण और सुन्दर होते हुए भी आप जड़ और उन्मत्त के समान विचरण कर रहे हैं।

संसार के अधिकांश लोग काम और लोभ के वश में होकर कष्ट पा रहे हैं। पर आप तो जीवन मुक्त प्रतीत होते हैं। कृपाकर मुझे यह बतलाइए कि आपको अपनी आत्मा में ही परमानन्द का अनुभव कैसे होता है?''

महात्मा ने प्रसन्न मुद्रा में उत्तर दिया, ''मैंने अपनी सदबुद्धि द्वारा ईश्वर कृपा से जिन अनेक गुरुओं का सहारा लिया है उनके मूक उपदेश लेकर मैं मुक्त भाव से इस जगत् में स्वच्छन्द घूमता हूँ।

मेरे गुरुओं के नाम हैं-**पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य, कबूतर, अजगर, समुद्र, पतंग, भौंरा, मधुमक्खी, हाथी, मछली, पिंगला, बालक, कन्या, सर्प, मकड़ी आदि।** मैंने जो-जो इन गुरुओं से सीखा है, वह सब तुम्हें सुनाता हूँ। मैंने पृथ्वी से धैर्य और क्षमा की शिक्षा ली है। लोग पृथ्वी पर कितना आघात और उत्पात करते रहते हैं, पर न तो यह किसी से बदला लेती है और न ही रोती-चिल्लाती है।

प्राणी जाने या अनजाने एक दूसरे का अपकार कर ही डालते हैं। धीर पुरुष को चाहिए कि दूसरे की विवशता को समझ कर वह न तो अपना धीरज खोएं

और न ही किसी पर क्रोध ही करें। जैसे वह आहार मात्र से इच्छा रखता है और उसके प्राप्त हो जाने से ही संतुष्ट हो जाता है वैसे ही मनुष्य को चाहिए कि जितनी कम चीजों से काम चल सकता है उतनी ही चीजें खरीदें, उतना ही भोजन करें।

वायु तो हरेक जगह जाती है, गन्दी जगह पर और अच्छी जगह पर। मगर वो उस जगह को अपने से साफ हवा वहाँ भर जाती हैं अर्थात् मनुष्य को भी अच्छे गुण अपनाने चाहिए। खराब गुण नहीं। आकाश से हमें यह शिक्षा मिलती है कि आकाश में प्रकृति के सारे विकार होते हुए भी जैसे वह निर्लिप्त रहता है आकाश शून्य है। उस सबमें ब्रह्म आत्मा रूप में सर्वत्र व्याप्त हैं।

इसलिए मनुष्य को आत्मा की आकाश रूपता की भावना करनी चाहिए। जल स्वभाव से ही स्वच्छ मधुर और पवित्र है। वैसे ही मनुष्य को स्वभाव से शुष्क, मधुरभाणी और लोकपावन होना चाहिए। अग्नि तेजस्वी तथा ज्योतिर्मय होती है और उसे अपने तेज से कोई दबा नहीं सकता जैसे उसके पास संग्रह के लिए कोई पात्र नहीं और वह सब कुछ भस्म कर डालती है। किन्तु जला देने से भी किसी वस्तु के दोषों से वह लिप्त नहीं होती, इसलिए मनुष्य को चाहिए कि तेजस्वी, अपने मन को अपने वश में रखते हुए सब दोषों से दूर रहने का प्रयास करना चाहिए।

चन्द्रमा की गति नहीं जानी जा

www.the-comforter.org

सकती है। पर काल के प्रभाव से उसकी कलाएँ घटती बढ़ती जाती हैं। वास्तव में न तो वह घटता है, और नही बढ़ता है। वैसे ही जैसे पूर्वजन्म से लेकर मृत्यु तक जितनी अवस्थाएँ हैं, सब शरीर की ही हैं।

आत्मा से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। जैसे आग की लपटें क्षण-क्षण में उत्पन्न और नष्ट होती रहती हैं वैसे ही काल के द्वारा प्राणियों के शरीर की उत्पत्ति और विनाश होते रहते हैं। जैसे सूर्य अपनी किरणों से पृथ्वी का जल खींचता और समय पर बरसाता है, वैसे ही अच्छे पुरुष समय पर ही विषयों का ग्रहण और त्याग करते हैं। प्राणी को बिना किसी इच्छा या प्रयत्न के पूर्व कर्मों के अनुसार सुख-दुःख प्राप्त होते रहते हैं।

अतः मनुष्य को चाहिए कि बिना माँगे, दूसरों को कष्ट दिए बिना, अजगर के समान उसे जीवन यापन करना चाहिए। समुद्र की तरह मनुष्य को गम्भीर व प्रसन्न रहना चाहिए। किसी भी कारण से उसे क्रोध नहीं करना चाहिए।

जैसे समुद्र वर्षा ऋतु में भी नदियों को बाढ़ के कारण बढ़ता नहीं है और न ही ग्रीष्मकाल में घटता है। इसी प्रकार मनुष्य को सांसारिक चीजों के मिलने से प्रसन्न, और न मिलने से खिन्न नहीं होना चाहिए। संन्यासी को चाहिए कि गृहस्थों को किसी प्रकार का कष्ट न दें और भौंरे के समान अपना जीवन निर्वाह करें।

जैसे भौंरा अनेक छोटे बड़े पुष्पों से उनका सार मात्र संग्रह करता है। वैसे ही मनुष्य को चाहिए कि सभी शास्त्रों से उनका सार मात्र ग्रहण करें। और मधुमक्खी से यह शिक्षा मिली कि संन्यासी को सायंकाल अथवा दूसरे दिन के लिए भिक्षा का संग्रह नहीं करना चाहिए।

मधु निकालने वाले से यह सीखा कि लोभी मनुष्य कठिनाई से धन जोड़ते हैं, किन्तु उस संचित धन का न तो दान करते हैं और न ही उपयोग जैसे मधु निकालने वाला मधुमक्खियों द्वारा संचित रस निकाल ले जाता है, वैसे ही ऐसे मनुष्यों के धन का उपयोग और कोई करता है।

मछली से यह शिक्षा ग्रहण की है कि जैसे मछली काटे से लगे मांस के टुकड़े से अपने प्राण गंवा देती है, वैसे ही स्वाद का लोभी मनुष्य भी अपनी जीभ के वश में होकर मारा जाता है।

इन सब दृश्यों को देखने के बाद यही विवेक जगा कि सद्गुरुदेव के शरणागत हो, उनकी आज्ञा में चलकर, उनके द्वारा बताई गई आराधना कर परमानंद का अनुभव ही जीवन का सर्वोत्तम धन है।

❖❖❖

www.the-comforter.org

ॐ श्री गंगाई नाथाय नमः

"नाम की महिमा"

निर्गुन बीज सगुन फल-फूला। शाखा ज्ञान "नाम" है मूला॥
मूल गहे तें सब सुख पावै। डाल-पात में "मूल" गँवावै॥
सतगुरु कहि नाम पहिचानी। निर्गुन सगुन "भेद बरनानी॥
अैसो नाम तें फिरि-फिरि आवै। पूरन "नाम" "परमपद पावै॥

"संत कबीर"

ॐ श्री गंगाई नाथाय नमः

1 पीटर 5:4 - "और जब "प्रधान-रखवाला" प्रकट होगा, तो तुम्हें "महिमा" का मुकुट दिया जायेगा, जो मुरझाने का नहीं।"

"बाइबल"

उदासीनता आराधना में बाधक

एक गहरी साधना है-अनवसाद। इसका शब्दार्थ है-**हताश न होना**, निराश न होना, अर्थात् चित्त की प्रसन्नता। **उदास रहना कदापि धर्म नहीं है**, चाहे वह और कुछ भले ही हो। प्रफुल्ल-चित्त तथा हँसमुख रहने से तुम ईश्वर के समीप पहुँच जाओगे। **प्रार्थना की अपेक्षा प्रसन्नता** के द्वारा हम ईश्वर के अधिक निकट पहुँच सकते हैं। ग्लानिपूर्ण या उदास मन से प्रेम कैसे हो सकता है? यदि ऐसे मन वाले प्रेम की बात करें तो वह मिथ्या है। वे तो दूसरों को कष्ट देना चाहते हैं।

धर्मान्धों या कट्टरपन्थियों की ही बात सोचिये। ऐसे लोग मुखमुद्रा तो बड़ी गम्भीर बनाते हैं, पर उनका सारा धर्म वाणी और कार्यों द्वारा दूसरों के साथ लड़ाई-झगड़ा करते रहना ही होता है। उनके कार्यों का पिछला इतिहास देखिये और सोचिये कि यदि उन्हें स्वतन्त्रता दे दी जाय तो अभी वे क्या कर डालेंगे। सारे संसार को यदि खून की नदी में डुबा देने से उन्हें कोई अधिकार प्राप्त होता हो तो वे कल ही ऐसा कर डालेंगे, **क्योंकि तिमिराच्छन्न अवसाद ही उनका ईश्वर है।**

ऐसी भीषणता की आराधना करने और गम्भीर मुखमुद्रा बनाये रहने के कारण उनके हृदय में प्रेम का नामोनिशान तक नहीं रह पाता और उन्हें किसी पर दया नहीं आती। **अतः जो मनुष्य सदा अपने को दुःखी मानता है, उसे ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती।** 'मैं कितना दुःखी हूँ, ऐसा सोचते रहना आसुरी भावना है, धर्म नहीं। हरेक मनुष्य को अपना बोझ ढ़ोना है। यदि तुम दुःखी हो तो सुखी बनने का प्रयत्न करो,

अपने दुःखों पर विजय प्राप्त करो। दुर्बलों को ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती। **अतः दुर्बल कदापि न बनो। तुम्हारे अन्दर असीम शक्ति है, तुम्हें शक्तिशाली बनना चाहिए।** अन्यथा तुम किसी भी वस्तु पर विजय कैसे प्राप्त करोगे? पर साथ ही अतिशय हर्ष अर्थात् हर्षोद्रेक या उद्धर्ष से भी बचते रहो। अत्यन्त हर्ष की अवस्था में भी मन शांत नहीं रह पाता, मन में चंचलता आ जाती है।

अति हर्ष के बाद सदा दुःख ही आता है। हँसी और आँसू का घनिष्ठ संबंध है। मनुष्य बहुधा एक अतिरेक से दूसरे अतिरेक की ओर दौड़ पड़ता है। चित्त सदा प्रसन्न रहे, पर शांत रहो। उसे अतिशयता की ओर कदापि भागने नहीं देना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक अतिशयता का परिणाम उलटा होता है। **अतः हर मानव प्राणी को मध्यम मार्ग पर चलना चाहिए।**

-स्वामी विवेकानन्द

गंगापुर सिटी (स. माधोपुर) में सामूहिक ध्यान मग्न साधक (1 अप्रेल 2018)

पाटोधा गाँव (हरियाणा) में ध्यान मग्न महिलाएँ (14 अप्रेल 2018)

www.thecomforter.org

समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग की अमृतमयी यादों के दिव्य पल

कोटा शाखा (8 जनवरी 2009)

जोधपुर आश्रम (30 जुलाई 2009)

बाड़मेर शाखा (2 अप्रेल 2009)

कोटा शाखा (26 नवम्बर 2009)

शिमोगा (कर्नाटक) में सिद्धयोग शिविर आयोजित। (16 अप्रेल 2018)

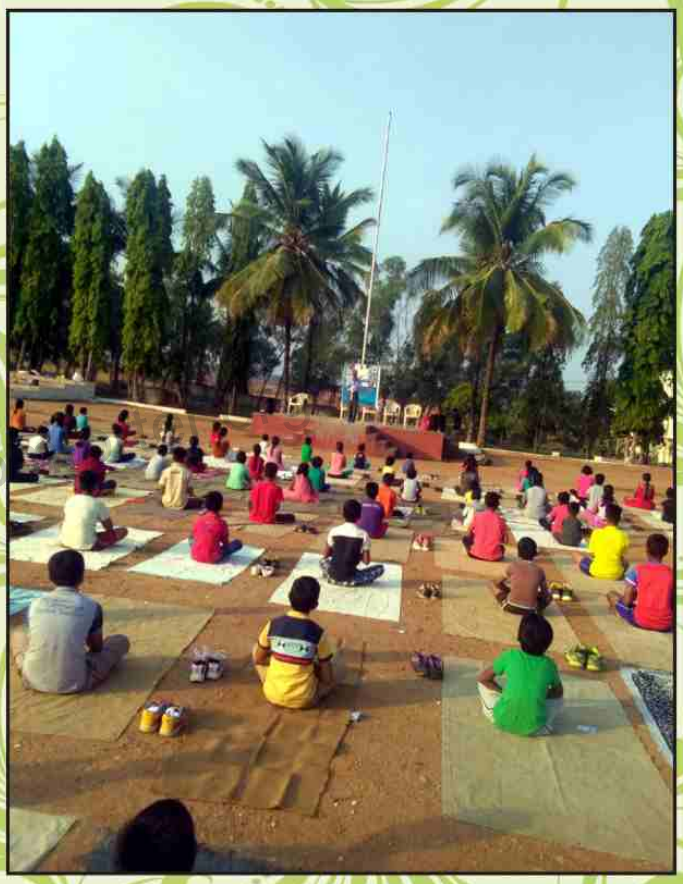

सायुज्य-सद्गुरुदेव के अद्भुत दर्शन

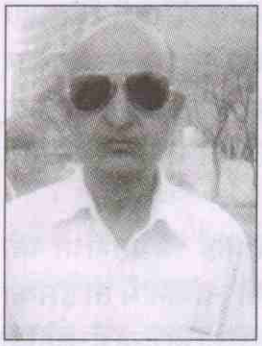

लगभग 10-12 साल पहले की बात है। मैं जोधपुर आश्रम आया और गुरुदेव के आसन पर प्रणाम कर ध्यान करने बैठ गया। ध्यान करने के बाद उठा तो मुझे हॉल के दरवाजे में से गुरुदेव आते हुए दिखे तो मैंने उनके चरणों में प्रणाम किया और उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखकर कहा कि "आप 15 मिनट ध्यान करो, मैं वापस आ रहा हूँ।"

मैंने 15 मिनट वापस ध्यान किया। फिर इतनी खुमारी आ गई कि काफी देर तक बैठा रहा। फिर सामान्य स्थिति हुई तो हॉल से बाहर जाकर एक गुरुभाई से पूछा कि गुरुदेव दर्शन देने कब आएंगे? तो उन्होंने कहा कि गुरुदेव तो अभी मुम्बई में हैं। मैंने कहा कि अभी गुरुदेव ने मुझे आशीर्वाद दिया और कहा कि आप 15 मिनट ध्यान करो, मैं आ रहा हूँ। उन्होंने कहा कि गुरुदेव 10-12 दिन से मुम्बई में ही हैं।

मुझे विश्वास नहीं हुआ तो मैंने मेरे मित्र गुरुभाई रामदयाल जी से पूछा तो उन्होंने कहा कि गुरुदेव तो मुम्बई में हैं, तब मुझे विश्वास हुआ और मुझे अपार खुशी हुई कि आज सद्गुरुदेव ने मुझे आशीर्वाद देकर धन्य कर दिया। मेरी प्रसन्नता का सागर उमड़ पड़ा।

ऐसे परम दयालू सद्गुरुदेव भगवान् को
बारंबार नमन् करता हूँ।

-दलपतसिंह राठौड़
गाँव-सारंगवास,
तहसील-सोजत,
जिला-पाली

www.the-comforter.org

भांति भांति के अहंकार

आदमी के अंदर बहुत-से अहं होते हैं। तुम उनके बारे में तब जान पाते हो जब तुम उन्हें नष्ट करना शुरू करो। जब तुम उस अहं को नष्ट करलो जो सबसे अधिक कष्टदायक था तो वह सामान्यतः एक तरह का भीतरी तूफान खड़ा कर देता है। जब तुम तूफान मेंसे बाहर निकल आते हो तो तुम्हें लगता है, "लो अब यह मामला समाप्त, सब कुछ हो गया, मैंने अपने अंदर के वैरी को नष्ट कर दिया, सब कुछ पूरा हो गया।"

लेकिन कुछ ही समय बाद तुम देखते हो कि एक और, और फिर एक और, और फिर एक और वैरी है, वस्तुत तुम छोटे-मोटे अहंकारों के ढेर से मिलकर बने हो जो पूरी तरह ऊधमी है जिन्हें एक के बाद एक जीतना जरूरी है। -श्री अरविन्द

यह कार्य सद्गुरु कृपा के बिना असंभव है। सद्गुरुदेव के सद्वचनों का अक्षरशः पालन करने पर अहंकार स्वतः ही समाप्त हो जाता है।

सिद्धयोग द्वारा पढ़ाई में एकाग्रता बढ़ी

मैं अपने परिवार के साथ पढ़ने के लिए सुदामा नगर मुरैना में एक किराये के मकान में रहता हूँ। मैं पढ़न के लिए बहुत प्रयास करता हूँ। लेकिन मेरा मन बहुत ही चंचल और चलायमान होने के कारण, पढ़ाई में मन नहीं लगता था।

हम लोग जिस किराये के मकान में रहते हैं, उस मकान के बगल में ही लक्ष्मी सिकरवार का मकान था। उनके पिताजी वहाँ पर आये हुए थे। उन्होंने सद्‌गुरुदेव के सिद्धयोग दर्शन के बारे में विस्तार से बताया। आश्रम से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिकाएँ 'स्पिरिचुअल-साइंस' पढ़ने के लिए दी।

उन्होंने बताया कि गुरुदेव के द्वारा दिये गए संजीवनी मंत्र के सघन जप व नियमित ध्यान द्वारा विद्यार्थियों की एकाग्रता व याददाश्त में वृद्धि होती है। सभी रोगों व नशों से मुक्ति मिल जाती है। मन में असीम शांति मिलती है।

मैंने कभी ऐसा सुना नहीं था इसलिए मुझे कोई खास विश्वास नहीं हुआ। लेकिन मासिक पत्रिका में भी सिद्धयोग से हुए परिवर्तनों के बारे में पढ़कर एक जिज्ञासा हुई कि गुरुदेव की तस्वीर का ध्यान करके देखा जाए कि सच्चाई क्या है?

एक दिन शाम को हम 5-6 लोग इक्कठे हो गए और सामूहिक ध्यान किया गया। 15 मिनट का ध्यान करने पर मन में असीम शांति का एहसास हुआ। मन स्थिर हो गया। ध्यान के दौरान सबने अपने अपने अनुभव बताए। सद्‌गुरुदेव के ध्यान के बाद मन में बड़ी प्रसन्नता छा गई।

उस दिन के बाद मैं नियमित रूप से गुरुदेव की वाणी में सुने हुए संजीवनी मंत्र के साथ, सुबह-शाम 15 मिनट ध्यान करने लगा। ध्यान के दौरान स्वतः ही यौगिक क्रियाएँ होने लगी। कई प्रकार के दृश्य दिखने लगे। बहुत ही अच्छा महसूस होने लगा। मंत्र जप व ध्यान द्वारा मेरी एकाग्रता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। गुरुदेव की असीम कृपा से सिद्धयोग का ही कमाल था कि 12 वीं कक्षा मैंने 89 प्रतिशत अंकों से उत्तीर्ण की। 24 अगस्त 2016 को मुझे मुख्यमंत्री द्वारा मेधावी विद्यार्थी प्रोत्साहन योजना में पच्चीस हजार रूपये की, लेपटॉप खरीदने के लिए राशि व प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया गया।

उस समय कई विद्यार्थियों को यह सम्मान मिला लेकिन मैं तो इसका श्रेय अपने गुरुदेव को ही देता हूँ क्योंकि दो साल पहले मैं बहुत ही चंचल था और ध्यान के बाद मेरी एकाग्रता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। मैं सारे विद्यार्थी मित्रों को राय देता हूँ कि अपने जीवन कल्याण व जीवन के हर कार्य को सुगमता पूर्वक पूर्ण करने के लिए सद्‌गुरुदेव सियाग का मंत्र जप व ध्यान जरूरी है।

-ध्रुव शर्मा उम्र-20 वर्ष
पुत्र श्री रामभजन शर्मा
निवासी-हडवानी,
जिला-मुरैना (म.प्र)

www.the-comforter.org

गतांक से आगे....

अनुभव-प्रधान युग का आगमन

अतः, व्यक्ति का तथा संसार का, जिसका व्यक्ति सदस्य है, सत्य एवं विधान खोज निकालने के लिये, यह व्यक्तिप्रधान युग मानवजाति का मौलिक प्रयास है। परम सत्य को खोज निकालने के लिए, आत्मा को सत्य से साक्षात्कार करने के लिए जिस अनुभूति और जीवन के अनुभव की जरूरत है, उस अनुभव की शुरूआत हो चुकी है। आगामी मानव जाति दिव्य जीवन धारण करेगी, उस विषय पर श्री अरविन्द ने सविस्तार वर्णन किया है कि आत्मा के पोषण के लिए एक अनुभव प्रधान युग का आगमन हो रहा है जिसमें मनुष्य पूर्णता प्राप्त करेगा।

कुछ समय के लिये तो वह इस कार्य को उस आलोचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक तर्क के बल पर करने का यत्न कर सकता है जो अब तक आधार था, परंतु अधिक समय तक नहीं। क्योंकि अपने तथा जगत् के अध्ययन में वह अपनी आत्मा और जगत् की आत्मा के साक्षात् संपर्क में आये बिना नहीं रह सकता और उसे पता लगता है कि वह सत्ता इतनी गहन, इतनी जटिल तथा गुप्त रहस्यों एवं शक्तियों से इतनी भरपूर है कि उसके सामने उसका बुद्धिजन्य तर्क एक अपर्याप्त प्रकाश तथा स्खलनशील जिज्ञासु है, क्योंकि वह केवल वस्तुओं के बाह्य तल तथा उसके ठीक नीचे के तल का ही सफल विश्लेषण करता है।

अतः अब अधिक गहरा ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता, अवश्य ही उसे अपने अंदर की नवीन शक्तियों एवं साधनों की खोज में प्रवृत्त कर देती है।

अब उसे पता लगता है कि वह आत्मालोचक बनकर नहीं प्रत्युत सक्रिय रूप में आत्मसचेतन होकर, अपनी आत्मा में अधिकाधिक निवास करते हुए तथा बाह्य तल पर ठोकरें खाकर नहीं वरन् अपनी आत्मा के द्वारा ही कार्य करते हुए, उसकी अपनी बहिरंग मानसिकता और मनोविज्ञान के पीछे जो तत्त्व विद्यमान है उसके साथ सचेतन समस्वरता स्थापित करके, अपने तर्क को आलोकित करके तथा इस प्रकार जिस गंभीरतर प्रकाश तथा शक्ति के प्रति वह उद्घाटित हो रहा है उसके द्वारा अपने कर्म को शक्तिशाली बनाकर ही वह अपने-आपको पूर्णतः जान सकता है।

इस प्रक्रिया में तर्कसम्मत आदर्श अंतर्बोधजन्य ज्ञान एवं गंभीरतर आत्मबोध के आदर्श का अनुगामी बनने लगता है; उपयोगितावादी आदर्श अपना स्थान आत्मचेतना तथा आत्मानुभूति के लिये अभीप्सा को दे देता है; भौतिक प्रकृति के व्यक्त नियमों के अनुसार जीवन यापन करने के नियम का स्थान, जगत् के जीवन में तथा मानवजाति के अनुसार जीवन यापन करने के नियम का स्थान, जगत् के जीवन में तथा मानव जाति के आंतर तथा बाह्य जीवन में जो गुप्त विधान, संकल्प तथा शक्ति क्रियाशील हैं उनके अनुसार जीवन व्यतीत करने का प्रयास ले लेता है।

ये सब प्रवृत्तियाँ अब व्यक्त रूप में इस संसार में विद्यमान हैं और एक उल्लेखनीय द्रुत गति से दिन-प्रतिदिन विकसित हो रही हैं, यद्यपि हैं अभी भद्दे, आरंभिक एवं अल्पविकसित रूप में ही। उनके आविर्भाव एवं व्यापक प्रभाव का अर्थ है मानव-विकास के युक्तिवादी एवं उपयोगितावादी युग से, जिसे व्यक्तिवाद ने जन्म दिया है, **समाज के एक महत्तर अनुभव-प्रधान युग की ओर संक्रमण।** इस परिवर्तन का प्रारंभ पुराने बौद्धिक आदर्शों की विरोधी चिंतन-धाराओं को विशाल और गंभीर गतियों में तीव्र वेग से मोड़ देने तथा पुराने मापदंडो को तेजी से तोड़-फोड़ देने की क्रिया के साथ हुआ।

उन्नीसवीं शताब्दी के भौतिकवाद ने प्रथम तो एक अद्भुत और गंभीर प्राणात्मवाद (Vitalism) को जन्म दिया जिसने जीवन के मूल और विधान के रूप में प्रतिस्थापित नीट्शे के जीवनेच्छा और अधिकारेच्छा के सिद्धांत से लेकर नवीन नानात्ववादी एवं व्यवहारवादी दर्शन पर्यन्त विविध रूप धारण किये।

वह दर्शन नानात्ववादी इसलिये है कि उसकी दृष्टि आत्मा की अपेक्षा कहीं अधिक जीवन पर केंद्रित है, व्यवहारवादी इसलिये कि वह सत्ता की व्याख्या ज्ञान एवं ज्योति की अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति एवं कर्म की परिभाषा में करना चाहता है। विचार की ये प्रवृत्तियाँ, जो कल तक विश्वयुद्ध के छिड़ने से पहले यूरोप, विशेषकर जर्मनी तथा फ्रांस, के जीवन और विचार पर गंभीर प्रभाव रखती थीं, बुद्धिवाद से जीवन तथा कर्म की ओर जाने के लिये उपरितलीय चेष्टाएँ ही नहीं थीं। यद्यपि स्थूलबुद्धि लोगों के व्यवहार में इन प्रवृत्तियों को प्रायः ऐसा ही रूप मिल जाता था; ये विश्व की जीवन-आत्मा को गंभीरतरपूर्वक जानने तथा उसके अनुसार जीवन को परिणत करने के प्रयत्न थीं और अपनी शैली में गंभीर मनोवैज्ञानिक एवं अनुभवात्मक प्रवृत्ति रखती थी।

क्रमशः अगले अंक में...

www.the-comforter.org

मनुष्य और विकास

-श्री अरविन्द

मनुष्य एक संक्रमणकालीन, विकसनशील प्राणी है। वह अभी विकास के पथ पर है। अभी वह अंतिम विकास नहीं है। उसका और उच्चतम विकास अभी बाकी है। सृष्टि विकास से आज तक सर्वोच्च प्राणी के रूप में मनुष्य ही है लेकिन वह अभी अपूर्ण है। उसके कोशों के सर्वांगीण विकास के लिए हर युग में वह परम सत्ता अवतार ग्रहण कर मनुष्य के विकास सोपान में उत्तरोत्तर सीढ़ियाँ लगाकर, तद्रूप का निर्माण कर रही है।

महर्षि श्री अरविन्द ने अपनी 'दिव्य जीवन' पुस्तक में मनुष्य के विकास को **'अतिमानव'** के रूप में व्याख्यायित किया है। उन्होंने अपने जीवन काल में ही यह उद्घोषित किया कि वह परमसत्ता मानव देह धारण कर, वर्तमान मनुष्य की अपूर्णता में पूर्णता के लिए, कार्य करेगी। समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग के सिद्धयोग से मनुष्य मात्र में जो बदलाव आ रहा है, **अतिमानवत्व की ओर अग्रसर का ही पथ है।** साधकों को यह भान रहे कि अपने विकास के लिए, वे नाम-जप व नियमित ध्यान की गहराईयों में गोते लगाते रहें। इस उच्चतम विकास के लिए सद्गुरु शरणागत होकर, आराधना परमावश्यक है।

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः...साक्षी चेता केवलः।।
एको वशी निष्क्रियाणां बहूनामेकं
बीजं बहुधा यः करोति।

वह एक देव, जो सभी सत्ताओं में गुप्त है, सर्वव्यापक, सबका अन्तःपुरुष, सभी कर्मों का अध्यक्ष, साक्षी, सचेतन ज्ञाता और निरपेक्ष... प्रकृति के प्रति निष्क्रिय रहने वाले बहु को वश में करनेवाला वह एक, एक ही बीज को अनेक प्रकार से रूप देता है।

श्वेताश्वतर उपनिषद् 6.11.12

एकैकं जालं बहुधा विकुर्वन्
अस्मिन् क्षेत्रे संश्चरत्येष देवः।
... योनिस्वभावानधितिष्ठित्येकः।
यच्च स्वभावं पचति विश्वयोनिः
पाच्यांश्च सर्वान्परिणामयेद्यः।
...गुणांश्च सर्वान्विनियोजयेद्यः।।

वह देव, वस्तुओं के प्रत्येक जाल को अलग-अलग बहुत प्रकार से बदलता हुआ, इस क्षेत्र में विचरता है.. वह एक ही सभी योनियों का और स्वभावों का अध्यक्ष है। यह स्वयं विश्वयोनि है। यह वही है जो सत्ता के स्वभाव को पकाता है और जिन्हें परिपक्व करता है, उन सबको उनका विकास-फल देता और उनकी क्रियाओं के सभी गुणों का विनियोग करता है।

श्वेताश्वतर उपनिषद् 5. 3-5

एकं रूपं बहुधा यः करोति।

वह वस्तुओं के एक ही रूप को नाना प्रकार से रूपायित करता है।

कठोपनिषद् 2.2.12

क इमं वो निण्यमा चिकेत
वत्सो मातृर्जनयत स्वाधाभिः।
बह्वीनां गर्भो अपसामुपस्थान्
महान् कविर्निश्चरतिस्वधावान्।।
आविष्ट्यो वर्धते चारुरासु
जिह्नानामूर्ध्वः स्वयशा उपस्थे।

किसने इस गुह्य ज्ञान का दर्शन किया है कि वत्स ही माता को स्वधा की क्रियाओं से जन्म देता है? अनेक जलों की गोद से उत्पन्न वह शिशु अपनी प्रकृति के सारे विधान से युक्त (स्वधान्) द्रष्टा होकर उनमें से प्रकट होता है। अभिव्यक्त होकर वह उनकी कुटिलताओं की गोद में बढ़ता है और उच्च, चारु तथा महिमावान् हो जाता है।

ऋग्वेद 1.95.4.5

असतो मा सद्गमय तमसो मा
जयोतिर्गमय मृत्योर्मामृतं गमय।

असत् से सत् की ओर, तम से ज्योति की ओर, मृत्यु से अमृत की ओर।

बृहदारण्यकोपनिषद् 1.3.28

तो पार्थिव जीवन का केन्द्रीय सार्थक उद्देश्य और मूलभूत तत्त्व है-आध्यात्मिक विकास, चेतना का जड़ प्रकृति में सतत विकसनशील आत्म-रूपायन में तब तक विकास जब तक बाहरी काया भीतर स्थित अध्यात्म सत्ता को प्रकट कर सके।

यह अर्थ शुरू में आत्मा, दिव्य सद्वस्तु की घनी जड़ निश्चेतना में अंतर्लीन रहने के कारण छिपा रहता है। निश्चेतना का पर्दा, जड़ पदार्थ की असंवेदनशीलता का पर्दा, उस वैश्व चित्-शक्ति को छिपाये रहता है, जो उसके अंदर कार्य करती है, ताकि ऊर्जा-जो वह पहला रूप है जिसे सृजन-शक्ति भौतिक विश्व में अपनाती है-अपने -आप निश्चेतन मालूम होती है, फिर भी विशाल गुह्य प्रज्ञा के कार्य करती है।

वास्तव में यह अंधेरी, रहस्यमय सृष्टि अंत में गुप्त चेतना को उसकी घनी, अंधकारमय कारा से मुक्त करती है।

❖❖❖

क्रमशः अगले अंक में...

www.the-comforter.org

सिद्धयोग :- शक्तिपात दीक्षा व कुण्डलिनी जागरण

भारतीय ऋषियों ने सृष्टि की उत्पत्ति के संबंध में अंतर्मुखी होकर खोज की तो पाया कि संपूर्ण ब्रह्माण्ड, मनुष्य के शरीर में है। जब हमारे ऋषियों ने और गहन शोध किया तो पाया कि इस जगत् को रचने वाला **सहस्रार** में स्थित है और उसकी **शक्ति मूलाधार** में। इन दोनों के कारण ही संसार की रचना हुई है। उस परम पुरुष की शक्ति, उसके आदेश से नीचे उतरती गई और अलग-अलग बंध लगाकर सभी लोकों की रचना करके मूलाधार में स्थित हो गई। इसके **चेतन** होकर **उर्ध्वगमन** करते हुए सहस्रार में पहुँचने का नाम ही **'मोक्ष'** है। मोक्ष की प्राप्ति जीते जी होती है। मरने के बाद मोक्ष की कल्पना करना, एक **मृगमरीचिका** ही है और कुछ नहीं।

गुरु-शिष्य परंपरा में जो शक्तिपात दीक्षा का विधान है। उसके अनुसार गुरु अपनी शक्ति से कुण्डलिनी को चेतन करके ऊपर को चलाते हैं। गुरु का शक्ति पर पूर्ण **प्रभुत्व** होता है। इसलिए वह उस गुरु के आदेश के अनुसार चलती है। क्योंकि यह सहस्रार में स्थित **परमसत्ता** की **पराशक्ति** है। अतः यह मात्र उसी का ही आदेश मानती है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि जिस व्यक्ति को सहस्रार में स्थित **उस परम तत्त्व** की सिद्धि हो जाती है, वही इसका संचालन करने का अधिकारी है। यह शक्ति विश्व में, **एक समय** में, मात्र **एक ही व्यक्ति** के माध्यम से कार्य करती है। क्योंकि यह **सार्वभौम सत्ता** है, इसलिए वह व्यक्ति विश्वभर में अभूतपूर्व क्रांतिकारी परिवर्तन करने की सामर्थ्य रखता है।

यह भारतीय दर्शन की विश्व को **अभूतपूर्व** एवं **अद्वितीय** देन है। अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर के संस्थापक व संरक्षक, प्रवृत्तिमार्गी परम श्रद्धेय समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलालजी सियाग अपने सद्गुरुदेव बाबा श्री गंगाईनाथजी योगी ब्रह्मलीन (जामसर) के आदेशानुसार इस **दिव्य ज्ञान** का **महाप्रसाद** बाँटने, विश्व में **अकेले** ही निकल पड़े हैं।

शक्तिपात से जब कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत हो जाती है तो **उर्ध्वगमन** करने लगती है। कई जन्मों के संस्कारों के कारण रास्ता अवरूद्ध रहता है। अतः साधक को विभिन्न प्रकार की यौगिक क्रियाएँ जैसेः- आसन, बंध, मुद्राएँ एवं प्राणायाम स्वतः ही होने लगते हैं। वह शक्ति साधक का शरीर, प्राण, मन और बुद्धि अपने अधीन कर लेती है। इस प्रकार जो क्रियाएँ होती हैं उन्हें साधक न तो करने की स्थिति में होता है और न ही रोकने की। वह शक्ति सीधा अपने नियंत्रण में सभी क्रियाएँ स्वयं करवाती है।

गुरुदेव के अनुसार भौतिक विज्ञान के शोधकर्त्ताओं की असंख्य समस्याओं का समाधान, इस ज्ञान से हो जाएगा। समाधि स्थिति में वह परमसत्ता हर समस्या का समाधान शोधकर्ताओं को करवा देगी। इस प्रकार मनुष्य जाति की असंख्य समस्याओं का समाधान हो जाएगा।

गुरु-शिष्य परंपरा में जिस सिद्धयोग अर्थात् महायोग का वर्णन है, उसके आदि गुरु कैलाशवासी भगवान् पर शिव हैं। शिव से यह ज्ञान अमर कथा द्वारा महायोगी **श्री मत्स्येन्द्र नाथ** जी को मिला। उनके परम शिष्य महायोगी श्री गोरखनाथजी ने इस सिद्धयोग से संसार का जो कल्याण किया है, वह सर्वविदित है। यह योग संसार के त्रिविध तापों-**आदि भौतिक, आदि दैहिक व आदि दैविक (Physical, Mental & Spiritual)** का शमन (**नाश**) करता है।

इसलिए संसार की कोई भी असाध्य बीमारी व वैज्ञानिक समस्या नहीं है; जिसका सिद्धयोग में समाधान न हो **अर्थात् सिद्धयोग में सब कुछ संभव है जो सदगुरुदेव श्री रामलालजी सियाग की शक्तिपात दीक्षा से मानवता में मूर्तरूप ले रहा है।**

सिद्धयोग से लाभ

समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग से मंत्र दीक्षा प्राप्त करने के बाद उनके चित्र का नियमित ध्यान एवं नाम जप द्वारा मातृशक्ति कुण्डलिनी के जागरण से साधक में निम्न परिवर्तन आ जाते हैं-

- सभी प्रकार के असाध्य रोगों जैसेः-एड्स, कैंसर, डायबिटीज, टी.बी, दमा, ब्लड प्रेशर, मिर्गी, बवासीर, हीमोफीलिया, हेपेटाइटिस व गठिया आदि से पूर्ण मुक्ति संभव।
- सभी प्रकार के मानसिक रोगों जैसेः-तनाव, पागलपन, उन्माद, फोबिया (भय), चिंता, अनिद्रा आदि से पूर्ण मुक्ति संभव।
- सभी प्रकार के नशों जैसेः- शराब, अफीम, हेरोइन, भांग, तम्बाकू (बीड़ी, सिगरेट व जर्दा) आदि से बिना किसी परेशानी के छुटकारा।
- विद्यार्थियों की **एकाग्रता** एवं **याद्दाश्त** में नाम जप व ध्यान द्वारा अभूतपूर्व वृद्धि।
- आध्यात्मिकता के पूर्ण ज्ञान के साथ भूत, वर्तमान एवं भविष्य की घटनाओं को ध्यान के समय प्रत्यक्ष देखना और सुनना।
- गृहस्थ जीवन में रहते हुए **'भोग एवं मोक्ष'** दोनों तत्त्वों की सहज प्राप्ति। इसके साथ ही जीवन की समस्त सांसारिक परेशानियों से छुटकारा।
- वैदिक दर्शन द्वारा ईश्वर की प्रत्यक्षानुभूति एंव साक्षात्कार।

❖❖❖

www.the-comforter.org

गतांक से आगे....

योग के बारे में

-महर्षि श्री अरविन्द

मनुष्य ईश्वर की सर्वोच्च कृति है। इस शरीर रूपी सुन्दर ग्रन्थ को पढ़ने के लिए, अपने जीवन की असंख्य समस्याओं व कष्टों से मुक्ति पाने के लिए, भारतीय सिद्धयोग दर्शन को अंगीकार करना परमावश्यक है। **समर्थ सद्गुरुदेव सियाग** ने मानव मात्र के कल्याण के लिए सिद्धयोग दर्शन को मानव मात्र में मूर्तरूप देकर समझाया है। योग से मनुष्य को अपने निज स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। इसी संबंध में महर्षि श्री अरविन्द ने अपनी पुस्तक-'**मानव से अतिमानव**' में विस्तार से समझाया है। साधकों के ज्ञान बोध के लिए ये शीर्षक यहाँ वर्णित किया जा रहा है।

जब तक तेरे अंदर कोई कामना है, चाहे वह पुनर्जन्म न लेने की कामना हो या मोक्ष की, तू परब्रह्म को नहीं पा सकता क्योंकि तत् में कोई कामना नहीं होती, न जन्म की न अजन्म की, न जगत् की और न जगत् से प्रयाण की। निरपेक्ष तेरी कामनाओं से सीमित नहीं है, उसी तरह जैसे वह तेरे ज्ञान की पहुँच से बाहर है।

अगर तू परात्पर ब्रह्म को जानना चाहे तो उस तरह से जान जैसे वह अपने-आपको जगत् में और जगत् के परे अभिव्यक्त करता है, क्योंकि परात्परता भी जगत् के साथ एक संबंध है, शुद्ध निरपेक्षता नहीं-अन्यथा वह अज्ञेय है। यही वेदान्त में कहा गया-युगपत् जानना और न जानना है।

परब्रह्म के बारे में हमें यह न कहना चाहिये कि 'तत्' जगत् से परात्पर है या **जगद्व्यापी** है या जगत् के साथ संबद्ध या अंबद्ध है क्योंकि जगत् और जगत् के ये सारे विचार, परात्परता और सर्वव्यापकता और संबंध-ये सब विचार की अभिव्यक्तियाँ है, जिनके द्वारा मन परब्रह्म की आत्माभिव्यक्तियों पर अपने ज्ञान के सिद्धान्त लागू करता है। हम यह दावा नहीं कर सकते कि उनमें से उच्चतम भी उसकी वास्तविक **सद्वस्तु** है जो एक ही साथ सर्व और सर्व के परे, शून्य और शून्य के परे है। निरपेक्ष के प्रति जगत् में अभिव्यक्त अन्तरात्मा को एक ही वृत्ति अपनानी चाहिये और वह है गम्भीर, विचारशून्य **निश्चल नीरवता (Silence)** की वृत्ति।

परब्रह्म के बारे में हम यह जानते हैं कि वह है और इस तरह से है जैसे और कोई भी वस्तु नहीं है, जगत् की कोई अवस्था नहीं है। क्योंकि हम जब कभी जिस किसी दिशा में आत्मानुभूति या विचार की अनुभूति, शरीर की अनुभूति या किसी भी प्रकार की **तात्त्विक अनुभूति** की दूरतम सीमा तक जायें तो भी हम तत् के किनारे पर पहुँचते हैं और हम पाते हैं कि, बिना जाने, हमारे अंदर इससे आगे के सत्य को करने की योग्यता नहीं है। वह चाहे कुछ क्यों न हो।

जब अन्तरात्मा भीतर की ओर गहराई से गहराई में जाती है और बाहर विस्तार से अधिक विस्तार में जाकर अपनी सत्ता की नीरव-निश्चलता में अज्ञात और अज्ञेय के सामने खड़ी होती है जिससे और जिसकी ओर जगत् एक ऐसे रूप में दिखायी देता है जो न तो भौतिक रूप से यथार्थ है न मानसिक रूप से यथार्थ, फिर भी, उसे न तो स्वप्न कहा जा सकता है न मिथ्यात्व।

तब समझ ले कि तू पवित्र से भी पवित्र के आगे खड़ा है, ऐसे पर्दे के सामने है जो फाड़ा न जायेगा। इस मर्त्य शरीर में तू उसे नहीं फाड़ सकता। किसी दूसरे शरीर में भी नहीं; शरीरस्थ आत्मा की स्थिति में भी नहीं और शुद्ध आत्मा के रूप में भी नहीं। न जागते हुए, न सोते हुए, समाधि में भी नहीं। किसी भी अवस्था या परिस्थिति में नहीं क्योंकि परात्पर ब्रह्म में प्रवेश करने से पहले तुझे अवस्था से परे होना चाहिये।

तत् ही अज्ञात भगवान् है जिसके लिये कोई वेदी नहीं बनायी जा सकती, कोई पूजा नहीं की जा सकती है। विश्व उसकी एकमात्र वेदी है, जीवन एकमात्र पूजा है। हम हैं, अनुभव करते हैं, सोचते, कार्य करते हैं या हैं तो पर अनुभव नहीं करते, सोचते नहीं, कार्य नहीं करते, यह तत् के लिये पर्याप्त नहीं है। उस तत् के लिये सन्त और पापी समान हैं, क्रियाशीलता और निष्क्रियता, मनुष्य और केंचुआ (मोलस्क) समान है क्योंकि सभी समान रूप से उसकी अभिव्यक्तियाँ हैं।

संदर्भ-श्री अरविन्द,
'मानव से
अतिमानव की ओर'

❖❖❖

क्रमशः अगले अंक में...

गतांक से आगे....

अहं से मुक्ति

यदि हमें अपनी आत्मा पर से इस निम्नतर प्रकृति का प्रभुत्व मिटाना हो तो हमें शान्ति के उस अतल सागर में डुबकी लगानी होगी और वही बन जाना होगा।

बदल-बदलकर आनेवाली ये अवस्थाएँ पूर्णयोग में, सहज ही, दीर्घ काल तक चल सकती हैं; क्योंकि, यहाँ आधार की समग्र पूर्णता की अपेक्षा की जाती है; उसे सब समयों में, सभी अवस्थाओं और परिस्थितियों में, वे चाहे कर्म की हों या निष्कर्मता की, परम सत्य की चेतना को अंगीकार करने में और फिर उसके अन्दर निवास करने में भी समर्थ बनना होगा।

केवल समाधि की मग्नता में या **निश्चल शान्ति** में चरम साक्षात्कार प्राप्त करना भी साधक के लिये काफी नहीं है, बल्कि उसे क्या समाधि में और क्या जागृति में, क्या निष्क्रिय चिन्तन में और क्या क्रियाशील शक्ति की अवस्था में, **सुप्रतिष्ठित ब्राह्मी चेतना की सतत् समाधि में रह सकना चाहिये।**

पर यद्यपि हमारी चेतन सत्ता पर्याप्त शुद्ध और निर्मल हो जाय या जब भी यह ऐसी हो जाय तो हमें उच्चतर चेतना में दृढ़ स्थिति प्राप्त हो जायेगी। निर्व्यक्तिक बना हुआ जीव, विश्वात्मा के साथ एकमय या परात्पर से अधिकृत होकर, ऊपर उच्च स्तर पर आसीन रहता है और प्रकृति की पुरानी क्रिया के जो भी अवशेष आधार में पुनः प्रकट हों, उन पर अविचलित भाव से दृष्टिपात करता है।

वह अपनी निम्नतर सत्ता में विद्यमान प्रकृति के तीन गुणों के कार्य व्यापार के कारण विचलित नहीं हो सकता, यहाँ तक कि दुःख-शोक के आक्रमणों के कारण भी वह अपनी स्थिति से चलायमान नहीं हो सकता। और अन्त में, बीच का पर्दा हट जाने के कारण, उच्चतर शान्ति निम्नतर विक्षोभ और विकार को अभिभूत कर देती है। एक **सुस्थिर नीरवता** प्रतिष्ठित हो जाती है जिसमें जीव ऊपर, नीचे तथा सब ओर पूर्ण रूप से अपनी सत्ता पर **सर्वोच्च** प्रभुत्त्व प्राप्त कर सकता है।

निश्चय ही, परम्परागत ज्ञानयोग का लक्ष्य ऐसा प्रभुत्व प्राप्त करना नहीं है। उसका लक्ष्य तो वस्तुतः ऊर्ध्व और **निम्न सत्ता** से तथा **सर्व** से परे हटकर अवर्णनीय परब्रह्म को प्राप्त करना है। परन्तु ज्ञानमार्ग का लक्ष्य चाहे जो हो, उसके एक प्रथम परिणाम के रूप में पूर्ण शान्ति अवश्य प्राप्त होनी चाहिये; क्योंकि जब तक हमारे अन्दर होने वाली प्रकृति की पुरानी क्रिया पूर्ण रूप से शान्त नहीं हो जाती, तब तक किसी सच्ची आत्मिक अवस्था या किसी दिव्य कर्म की नींव रखना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

हमारी प्रकृति सत्तागत अव्यवस्था के आधार पर तथा कर्म के प्रति अशान्तिपूर्ण प्रेरणा के कारण कार्य करती है, भगवान् अथाह शान्ति में से मुक्त रूप से कार्य करते हैं। **यदि हमें अपनी आत्मा पर से इस निम्नतर प्रकृति का प्रभुत्व मिटाना हो तो हमें शान्ति के उस अतल सागर में डुबकी लगानी होगी और वही बन जाना होगा।** अतएव, विश्वात्मभाव को प्राप्त हुआ जीव सर्वप्रथम नीरवता (Silence) में आरोहण करता है; वह विशाल, शान्त, निष्क्रिय बन जाता है। तब जो भी क्रिया घटित होती है, वह शरीर की या इन अंगों की हो या और कोई, उसे जीव देखता है, पर उसमें भाग नहीं लेता, न उसे अनुमति देता और न उससे किसी प्रकार का सम्बन्ध जोड़ता है।

तब कर्म तो होता है, पर कोई व्यक्ति-रूप कर्ता नहीं होता, न कोई बन्धन या दायित्व ही होता है। यदि वैयक्तिक कर्म करने की जरूरत हो तो जीव को एक प्रकार के अहं को सुरक्षित रखना या पुनः प्राप्त करना होता है जिसे अहं का एक विशेष रूप किंवा ज्ञाता, भक्त, सेवक या यन्त्ररूप "मैं" की एक प्रकार की मानसिक प्रतिमा कहा गया है, पर वह केवल प्रतिमा ही होती है, वास्तविक वस्तु नहीं।

यदि अहं की यह प्रतिमा भी न हो तो भी कर्म प्रकृति के अभी तक चले आ रहे, पुराने वेगमात्र से जारी रह सकता है, पर उसका व्यक्ति-रूप कर्ता कोई भी नहीं होता, वस्तुतः तब कर्ता का किसी प्रकार का भान भी बिल्कुल नहीं होता; क्योंकि जिस परम आत्मा में जीव ने अपनी सत्ता का लय किया है, वह निष्क्रिय एवं अगाध शक्तिमय है।

उधर कर्म-मार्ग हमें ईश्वर का साक्षात्कार तो प्राप्त कराता है, पर यहाँ उस **ईश्वर** का भी ज्ञान प्राप्त होना शेष रह जाता है; यहाँ तो होता है केवल **निश्चल-नीरव** आत्मा और क्रियाशील प्रकृति जो अपने कार्य कर रही है; प्रारम्भ में ऐसा प्रतीत होता है कि वह भी अपने कार्य सचमुच की सजीव सत्ताओं के द्वारा नहीं, बल्कि ऐसे नाम-रूपों के द्वारा कर रही है जो आत्मा में अस्तित्व तो रखते हैं, पर जिन्हें आत्मा वास्तविक नहीं मानता।

-श्री अरविन्द, 'योग समन्वय' पुस्तक से

क्रमशः अगले अंक में...

अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर

उद्देश्य

- समस्त विश्व के मानवों के कल्याण हेतु बिना किसी वर्ग, वर्ण, जाति, धर्म, राष्ट्रीयता एवं लिंग भेद के इस दिव्य अध्यात्म ज्ञान का प्रचार एवं प्रसार करना एवं समस्त विश्व में अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र स्थापित करना।
- विश्व के समस्त धर्मों के विकारों एवं आडम्बरों से मानव मात्र को मुक्त करना एवं अध्यात्म के मूलभूत सार्वभौम सिद्धांत के अनुसार मन मंदिर में उस परमतत्त्व की प्रत्यक्षानुभूति एवं साक्षात्कार कराना।
- विश्व भर में वैदिक दर्शन की प्रत्यक्षानुभूति एवं साक्षात्कार करवाकर भौतिक जगत् में विज्ञान की तरह उसे सत्य प्रमाणित करना।
- विश्व कल्याण हेतु संपूर्ण विश्व में वैदिक मनोविज्ञान (अध्यात्म विज्ञान) की शिक्षा हेतु प्रबन्ध करना तथा वहीं के लोगों को इस ज्ञान का प्रशिक्षण देने योग्य बनाना।
- विश्व के सकारात्मक स्त्री-पुरुषों को शक्तिपात-दीक्षा देकर चेतन करना तथा उन्हें अपने ही देश में इस ज्ञान के प्रचार-प्रसार का अधिकार देकर मानव शान्ति का पथ प्रशस्त करना।
- सिद्धयोग में वर्णित शक्तिपात दीक्षा द्वारा मानवीय गुणों में परिवर्तन लाया जाकर तमोगुण से रजोगुण, रजोगुण से सतोगुण, सतोगुण से त्रिगुणातीत जाति में बदलकर, उस परम तत्त्व की प्रत्यक्षानुभूति एवं साक्षात्कार कराना।

www.the-comforter.org

आकाश और पृथ्वी का मिलन-योग

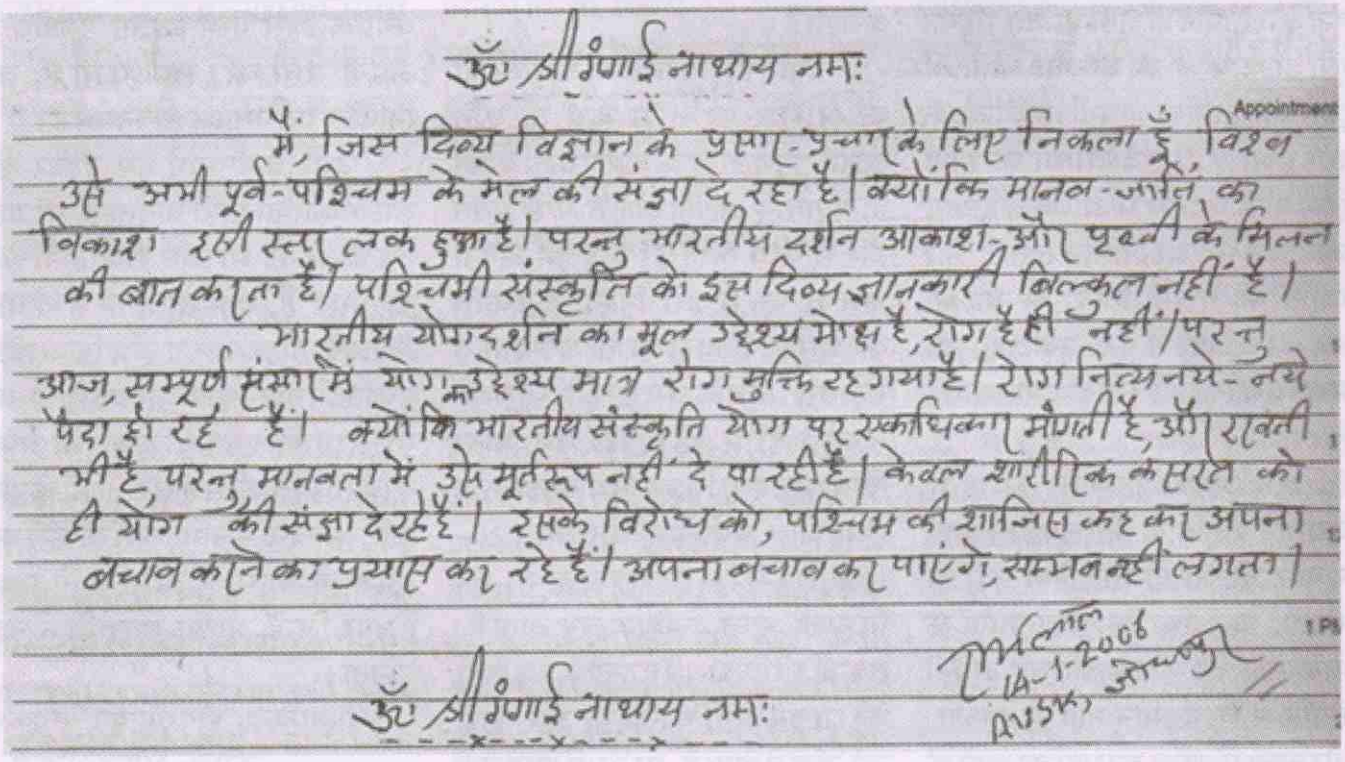

ॐ श्री गंगाई नाथाय नमः

मैं, जिस दिव्य विज्ञान के प्रसार-प्रचार के लिए निकला हूँ विश्व उसे अभी पूर्व-पश्चिम के मेल की संज्ञा दे रहा है। क्योंकि मानव-जाति का विकास इसी स्तर तक हुआ है। परन्तु भारतीय दर्शन आकाश और पृथ्वी के मिलन की बात करता है। पश्चिमी संस्कृति को इस दिव्य ज्ञान कारी बिल्कुल नहीं है।

भारतीय योगदर्शन का मूल उद्देश्य मोक्ष है, रोग है ही नहीं। परन्तु आज, सम्पूर्ण संसार में योग का उद्देश्य मात्र रोग मुक्ति रह गया है। रोग नित्य नये-नये पैदा हो रहे हैं। क्योंकि भारतीय संस्कृति योग पर एकाधिकार मानती है, और रखती भी है, परन्तु मानवता में उसे मूर्तरूप नहीं दे पा रही है। केवल शारीरिक कसरत को ही योग की संज्ञा दे रहे हैं। इसके विरोध को, पश्चिम की शाजिश कह कर अपना बचाव करने का प्रयास कर रहे हैं। अपना बचाव कर पाएंगे, सम्भव नहीं लगता।

रामलाल
14-1-2006
AVSK, जोधपुर

ॐ श्री गंगाई नाथाय नमः

અદ્ભૂત સિદ્ધયોગ

સિદ્ધયોગ સાધનામાં પાળવાના નિયમો

(૧) સાધકે ગુરુદેવ સિયાગ પ્રતિ સંપુર્ણ શ્રદ્ધા અને સમર્પણ ભાવ રાખવો સાધકની શ્રદ્ધા અને સમર્પણ જેટલી વધારે હોય તેટલા જ પ્રમાણમાં એને સાધના સફળ થાય છે. જેમબેંક ખાતામાં જીફ્ર્દૈહપ્ન નું રોકાણ ઓછું હોય તો ઓછું વ્યાજ મળે અને વધારે રોકાણ હોય તો વધારે વ્યાજ મળે તેમશ્રદ્ધાના પ્રમાણમાં તેનું ફળ પ્રાપ્ત થાય છે. ગુરુ પર શ્રદ્ધા ના હોય તો કા તો ઓછી હોય તો મંત્રજાપ અને ધ્યાનની અસર જેવી જોઈએ તેવી થતી નથી.

(૨).ગુરુદેવ પાસેથી દીક્ષા લીધા પછી એનું ઈચ્છિત પરિણામમેળવવા માટે સંપુર્ણ શ્રદ્ધા, એકાગ્રતા અને ખંત સિદ્ધયોગ સાધના કરવી. આ સાધના દરમિયાન બીજા કોઈ સંત, ગુરુ, બાબા, ભુવા, તાંત્રિક, માંત્રિક કે ફકીરની પાછળ જવું નહી. પોતે સ્વીકારેલ ગુરુ પર અડીખમરહેવું અને તેની જ આરાધના કરવી. અલગ અલગ ગુરુઓ પાછળ પડવાથી શ્રદ્ધા વહેંચાઈ જાય છે. પરિણામે સાધકના હાથમાં કંઈ જ આવતું નથી. દા.ત. એક ડૉકટરનો અલાજ ચાલતો હોય ત્યારે આપણે બીજા ડૉકટરનો ઈલાજ કરતા નથી. કારણ બંનેની દવા અને ટ્રીટમેન્ટ મીક્ષ થાય તો બીમારી દુર થવાને બદલે વધુ વણસી જવાની શકયતા છે. એટલે એક જ ગુરુ પર શ્રદ્ધા રાખીને સાધના કરવી.

(૩).સિદ્ધયોગ સાધના એ ઈશ્વર પ્રાપ્તિનો સર્વોત્તમમાર્ગ છે. કારણ કે જે બ્રહ્માંડમાં જે તેત્રીસ કરોડ દેવી - દેવતા પૂજાય છે એવા દેવોના દેવ મહાશિવ પાસે સિદ્ધયોગ નો ર્સતો જાય છે. જેમઆપણને ઝડપી પ્રવાસ માટે હાઈવે મળી ગયો હોય તો આપણે નાના ર્સતાઓ અને ગલીઓમાં જતાં નથી. એ જ પ્રમાણે સિદ્ધયોગનો ર્સતો મળઅયા પછી નાના મોટા કર્મકાંડ, મંદિરોના આંટાફેરા અને યાત્રા ધામપ્રવાસ વગેરેની જરૂર રહેતી નથી. બીજા ગુરુઓ કે સંતો અને કર્મકાંડ કરતા લોકો પ્રતિ આદરભાવ જરૂર રાખવો પરંતુ સિદ્ધયોગનો માર્ગ છોડવો નહી.

(૪).સિદ્ધયોગ સાધના એટલે સાક્ષાત ઈશ્વરના અલૌકિક તેની સાધના છે.તેની સામે કોઈ પણ ભૂત-પ્રેત, વળગાડ કે જાદુટોનાની અસર થતી નથી. એથી જ ગુરુદેવ સિયાગના શિષ્યે કોઈ પણ પ્રકારના ધાગા, દોરા, તાવીજ કે યંત્રોના બંધનમાં ફસાવું નહી. આ પ્રકારની કાલા જાદુ અથવા તાંત્રિક, માંત્રિક પાસે જવાથી સિદ્ધયોગ સાધનામાં ખલેલ પડે છે અનો સાધક ગંભીર પ્રકારની મુશ્કેલીનો સામનો કરવો પડે છે.

(૫).સિદ્ધયોગ સાધના કરતી વખતે કોઈ બીમારીના કારણે ડૉકટર કે વૈદ્યની દવા લેવી પડે તો જરૂર લેવી. પરંતુ દવાને વળગીના રહેવું. સાધક જેટલી શ્રદ્ધાથી ગુરુદેવને રોગમુક્તિ માટે પ્રાર્થના કરશે એટલા જ ઝડપથી એની બીમારી દવા લીધા વગર મટી ગયાનો અનુભવ તેને થશે. ડૉકટરોએ જે દર્દીઓને જીવતા રહેવાની આશા છોડી દે દીધી હોય આવા અસંખ્ય દર્દીઓ ગુરુદેવ સિયાગના શરણે આવ્યા પછી મૃત્યુના કાંઠેથી પાછા ફરી અને સાજા થઈને નોર્મલ જીવન જીવી રહ્યા છે.

(૬).ભારતીય ધર્મશાસ્ત્રના અનુસાર મનુષ્યના આત્મિક ઉધ્ધાર કરવાની જવાબદારી ઈશ્વરે જેના વાણીમાં સત્યતા હોય એવી ગુરુને સોંપી છે. એટલે જ જે સદ્ગુરુ જીવન અને આધ્યાત્મિક જ્ઞાનનું દાન કરે છે એને ઈશ્વર ગણીને પૂજવું.

(૭).ધર્મગ્રંથો પ્રમાણે ગુરુની કૃપા સંપુર્ણ પ્રમાણે પ્રાપ્ત કરવા માટે ગુરુદક્ષિણા આપવી જરૂરી છે. સાધકે યથા શક્તિ તન (શ્રમ), મન (જ્ઞાનનો પ્રચાર), ધન આપીને ગુરુની સેવા કરવી એ જ સાચી ગુરુદક્ષિણા કહેવાય. ભગવાન શ્રીકૃષ્ણે ગીતામાં કહ્યું છે તેમશિષ્ય ગુરુને આદર અને પ્રેમભાવથી જે કાંઈ ભેટ આપે ભલે એ ફુલ જેવી નાનામાં નાની વસ્તુ કેમન હોય એને જ ગુરુદક્ષિણા આપી એવું કહેવાય.

(૮).ગુરુકૃપાથી ભૌતિક લાભ જેવું કે ધન, સાંસારિક સુખ, પુત્ર પ્રાપ્તિ અથવા જમીન જાયદાદ મેળવ્યા બાદ સિદ્ધયોગ સાધના બંધ કરવી અને ગુરુદેવ પ્રતિ શ્રદ્ધા છોડી દેવી એ ઘણું જ અયોગ્ય કહેવાય.

આવું કરવાથી સાધકને મળેલ લાભ લાંબા સમય સુધી ટકતો નથી અને તે સંસારની અનેક મુશ્કેલીઓ પાછો ધકેલાય જાય છે. એટલે જ લાભ મેળવ્યા પછી પણ ગુરુદેવ ઉપર જીવનભર શ્રદ્ધા રાખવી જરૂરી છે.

સિદ્ધયોગ આરાધનામાં આડંબરની જરૂર નથી :

ગુરુદેવ સિયાગે બતાવેલી આરાધના ના વિશિષ્ટતા એ છે કે એમાં કોઈપણ જાતના આડંબરને સ્થાન નથી. આમાં વિશિષ્ટ પ્રકારના કપડા, ખાનપાન કે આસનની જરૂર હોતી નથી. સાધકને જે પહેરાવ ઠીક લાગે તે અને જે જગ્યા અનુકૂળ હોય તે જગ્યાએ સાધક ધ્યાન કરી શકે છે. પછી એ રૂમમાં હોય કે બહાર ખુલ્લામાં બેઠો હોય. ગુરુદેવના ઘણા શિષ્યો પ્રવાસ કરતી વખતે

www.the-comforter.org

मुझे परमसत्ता ने संसार के सामने पूर्ण रूप से प्रकट होने को मजबूर कर दिया है।

मैं संकोचवश संसार के सामने प्रकट होने में कुछ झिझक रहा था। परन्तु उस परमसत्ता ने भौतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से मुझे अपनी इच्छानुसार चलाने के लिए मजबूर कर दिया। सारे रास्ते बन्द करके एक ही रास्ता खुला रखा जिस पर मुझे चलाना चाहती हैं।

मैंने प्रार्थना की, हे प्रभु ! संसार के लोग स्वांग रचे बिना मानने वाले नहीं है। मैं गृहस्थी जीवन से अभी निवृत भी नहीं हो सका हूँ। अतः संन्यास धारण करने की हालत में नहीं हूँ, और इस युग के लोग स्वांग के बिना मुझे स्वीकार नहीं करेंगे।

इस पर मुझे स्पष्ट दिखाया गया कि **''देख मैंने तेरा तन और मन सारा रंग दिया है, बनावटी स्वांग की तुझे जरूरत नहीं हैं। कर्ता तो मैं हूँ परन्तु माध्यम तो तुझे ही बनना पड़ेगा।''** मैंने तुझे प्रारम्भ से अन्त तक सब कुछ सिखा और दिखा दिया है फिर झिझक कैसी ? मुझे स्पष्ट आदेश है कि जो कुछ होना है, **सभी पूर्व निश्चित है। सारे माध्यम तुझे स्वयं निश्चित समय पर निरन्तर मिलते जायेंगे।** इस प्रकार मुझे भौतिक संसार के सामने स्वयं प्रकट होना ही पड़ेगा।

मुझे स्पष्ट बताया गया कि आदि काल से जितनी भी शक्तियाँ भौतिक संसार में अवतरित हुई हैं, सभी ने अपने शक्ति का स्वयं ही परिचय दिया है।

संसार का मानव इस स्थिति में कभी नहीं रहा है कि उसने अपने आप उस शक्ति का पता लगाया हो। इसके विपरीत संसार की तामसिक शक्ति कभी नहीं चाहेगी कि सात्त्विक शक्ति का उदय भौतिक जगत् में हो। अतः उनका विरोध करना जरूरी है। **विरोध जितना प्रबल होगा, प्रकाश भी उतनी ही तेज गति से फैलेगा।**

अतः अनादि काल से सत्युग, त्रेता, द्वापर और कलियुग का क्रम चलता आया है और अनादि काल तक चलता रहा है। हर युग का एक निश्चित समय होता है। इस क्रमिक परिवर्तन में कोई शक्ति रूकावट नहीं डाल सकती है, ये सब बातें मुझे बहुत अच्छी प्रकार बता दी गई और समझा दी गई हैं। मुझे

रात्रि के देवता कभी नहीं चाहते कि सूर्योदय हो, परन्तु आदि काल से दिन और रात का क्रम चल रहा है। प्रकाश और अन्धेरा दोनों ही उस परमसत्ता की देन हैं।

'अन्धेरे के बिना प्रकाश का ज्ञान नहीं होता और प्रकाश के बिना अन्धेरे का।' दोनों एक दूसरे के विरोधी दिखते हुए भी एक दूसरे के पूरक और सहयोगी है। संसार चक्र आदि काल से अबाध गति से चलता आया है। यह किसी से प्रभावित भी नहीं होता।

जीवन के प्रारम्भ काल से ही ये बातें दिखाई और समझाई जाती रही है, परन्तु मैं आज तक इसे मानवीय कल्पना या मन का खेल समझता रहा। इनमें भी सच्चाई हैं, मुझे कभी विश्वास नहीं हुआ। परन्तु ये सारी बातें जब भौतिक रूप से सत्य होने लगी तो मैं बहुत आश्चर्यचकित हुआ। अनेक घटनाओं को भौतिक रूप से सत्यापित करके मुझे समझा दिया गया है कि जो कुछ बताया गया है, पूर्ण सत्य है और भौतिक रूप से घटेगा।

भारत में ही कार्य करने की मेरी

कल्पना पर स्वामी विवेकानन्द जी के पत्र पढ़ा कर पानी फेर दिया। स्वामी जी ने संस्था के लोगों को अमेरिका और पेरिस से जो पत्र लिखे, उनसे मेरा मोह भंग हो गया। स्वामी जी ने लिखा था:-

भारत में तो मुझे रोटी के एक टुकड़े के साथ डलिया भरी गालियाँ मिलती हैं। मैं कहीं भी जाऊँ। प्रभु मेरे लिए काम करने वालों के, दल के दल भेज देते हैं। वे लोग भारतीय शिष्यों की तरह नहीं हैं। अपने गुरु के लिए प्राणों तक की बाजी लगाने को प्रस्तुत हैं। पाश्चात्य देशों में प्रभु क्या करना चाहते हैं? यह तुम हिन्दुओं को कुछ ही वर्षों में देखने को मिलेगा।

तुम लोग प्राचीन काल के यहूदियों जैसे हो और तुम्हारी स्थिति नांद में लेटे हुए कुत्ते की तरह है, जो न खुद खाएं और न दूसरों को ही खाने देना चाहता है। तुम लोगों में किसी प्रकार की धार्मिक भावना नहीं हैं। रसोई ही तुम्हारा ईश्वर है तथा हँडिया बर्तन ही तुम्हारा शास्त्र। अपनी तरह ही असंख्य सन्तानोत्पादन में ही तुम्हारी शक्ति का परिचय मिलता है।

'' दूसरे पत्र में इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हुए स्वामी जी ने अन्त में कह डाला '' क्या तुम यह कहना चाहते हो कि ऐसे जाति भेद जरजरित, कुसंस्कार युक्त, दया रहित, कपटी, नास्तिक, कायरों में से जो केवल शिक्षित हिन्दुओं में ही पाये जा सकते हैं, एक बनकर जीने के लिए मैं पैदा हुआ हूँ?

मैं कायरता को घृणा की दृष्टि से देखता हूँ। कायर तथा राजनीतिक मूर्खतापूर्ण बकवासों के साथ, मैं अपना सम्बन्ध नहीं रखना चाहता। किसी प्रकार की राजनीति में विश्वास नहीं हैं। **ईश्वर तथा सत्य ही जगत् में एक मात्र राजनीति है।** बाकी सब कूड़े करकट हैं।' स्वामी जी के उपर्युक्त पत्र दिखा कर मेरा मोह भंग कर दिया गया।

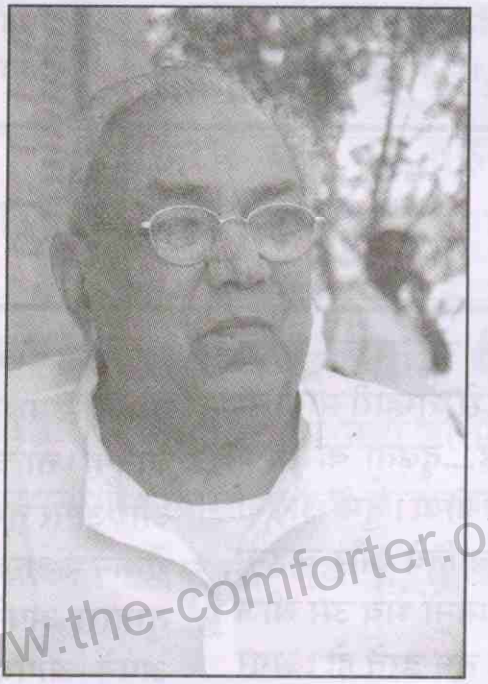

'मनुष्य शरीर ही सर्वोत्तम मंदिर है।' मुझे प्रकाशप्रद शब्द के द्वारा सब कुछ मेरे अन्दर ही मिला। मुझे बताया गया कि **यीशु भी शरीर को ही सर्वोत्तम मंदिर मानता था।** यीशु ने कहा था :- ''मैं

मनुष्यों की प्रशंसा नहीं चाहता। मैं यह जानता हूँ कि तुममें परमेश्वर का प्रेम नहीं हैं। मैं अपने पिता का अधिकार लेकर आया, पर तुमने मुझे ग्रहण नहीं किया। दूसरे कोई अपने ही अधिकार से आए तो तुम उसे ग्रहण करोगे। एक ही परमेश्वर है। तुम उस परमेश्वर से प्रशंसा प्राप्त करने की कोशिश नहीं करते, पर एक दूसरे की प्रशंसा ग्रहण करते हो।

तुम कैसे विश्वास कर सकते हो? यह न सोचो कि मैं पिता के सामने तुम पर दोष लगाऊँगा। तुम पर दोष लगाने वाला 'मूसा' है, जिस पर तुमने आशा रखी है। यदि तुमने मूसा पर विश्वास किया होता तो तुम मेरा भी विश्वास करते क्योंकि मूसा ने मेरे विषय में लिखा है। मूसा ने जो लिखा है, उस पर जब तुम विश्वास नहीं करते तो मेरे संदेश पर क्यों विश्वास करोगे''। मरने से पहले यीशु ने जिस सहायक की बात कही हैं

''पिता से विनती करूँगा और वह तुम्हें एक और सहायक देगा, कि वह सर्वदा तुम्हारे साथ रहे। अर्थात् सत्य का आत्मा, जिसे संसार ग्रहण नहीं कर सकता, क्योंकि वह न उसे देखता है और न उसे जानता है। तुम उसे जानते हो क्योंकि तुम्हारे साथ रहता है, वह तुममें होगा। **मैं तुम्हें अनाथ नहीं छोड़ूँगा। मैं तुम्हारे पास आता हूँ। थोड़ी देर रह गई है कि फिर संसार मुझे न देखेगा, परन्तु तुम मुझे देखोगे, इस लिए कि मैं जीवित हूँ। और तुम भी जीवित रहोगे।**'' भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में जिस अमर जीवात्मा की बात कही है, यीशु का इशारा उसी तरफ है। परन्तु कालचक्र के प्रभाव से धीरे धीरे सारा ज्ञान लुप्त हो गया है। पैगम्बर और अवतार में यही अन्तर होता है।

पैगम्बर संदेश लेकर आता है, वह केवल संत पुरुषों को प्रभावित करता है तथा उनकी आस्था ईश्वर के प्रति दृढ़ करता है, जिससे कुछ काल के लिए शान्ति स्थापित होती हैं परन्तु राक्षस वृत्ति के लोग पैगम्बर की बात नहीं मानते। यीशु और मूसा के साथ यही हुआ। परन्तु अवतार का होना युग परिवर्तन का संकेत है। सत्युग, त्रेता, द्वापर इसके प्रमाण हैं। कलियुग की समाप्ति भी उस परम सत्ता के पृथ्वी पर अवतरण के बाद होगी। ''सत्लोक'' और

www.the-comforter.org

"अलख लोक" की शक्तियाँ त्रेता और द्वापर में अवतरित हो चुकी हैं। कलियुग की समाप्ति के लिए अब "अगम लोक" की सर्वोच्च शक्ति को अवतार लेना होगा।

महर्षि अरविन्द के अनुसार वह शक्ति 24.11.1926 को इस पृथ्वी पर मानव रूप में अवतरित हो चुकी है। अपने क्रमिक विकास के साथ वह शक्ति 1994 के प्रारम्भ में संसार के सामने प्रकट हो जायेगी।

इस प्रकार इस सदी के अन्त तक पूरे संसार के मानव उस शक्ति के आकर्षण में आ जायेंगे। इस प्रकार 21 वीं सदी के प्रारम्भ में भारत विश्व का धर्म गुरु बन जायेगा। भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता के 18वें अध्याय के 66वें श्लोक में जो उपदेश दिया है-

संसार पूर्ण रूप से उसका पालन प्रारम्भ कर देगा। भगवान् ने कहा है :-

सर्वधर्मान्परित्यज्य
मामैकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो
मोक्षयिष्यामि मा शुचः।। 66।।

इस प्रकार कलियुग का अंत होकर सत्युग प्रारम्भ हो जायेगा। इस प्रकार श्री अरविन्द की यह भविष्यवाणी सत्य होगी :- "एशिया जगत-हृदय की शान्ति का रखवाला है, योरोप की पैदा की हुई बीमारियों को ठीक करने वाला है। योरोप ने भौतिक विज्ञान, नियंत्रित राजनीति, उद्योग, व्यापार आदि में बहुत प्रगति कर ली है। अब भारत का काम शुरू होता है। उसे इन सब चीजों को 'अध्यात्म शक्ति' के अधीन करके धरती पर स्वर्ग बसाना है।" उपर्युक्त भविष्यवाणी सत्य तभी होगी, जब भारत पश्चिम जगत् को अपनी आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा पूर्णरूप से आकर्षित कर लेगा।

17.06.1988

भय का निवारण

एक छोटी-सी तरकीब है जो बहुत-बहुत आसान है। क्योंकि यह साधारण से, तुम्हारी सामान्य बुद्धि के प्रश्न पर आधारित है....दृढ़ता के साथ भागवत चेतना पर निर्भर रहना होगा। तुम्हें अपना कुछ-कुछ अवलोकन करना चाहिये और कहना चाहिये कि जब तुम डरते हो तो मानों भय उस चीज को आकर्षित कर रहा है जिससे तुम डरते हो। अगर तुम बीमारी से डरते हो तो मानो बीमारी को आकर्षित कर रहे हो।

अगर तुम दुर्घटना से डरते हो, मानो तुम दुर्घटना को आकर्षित कर रहे हो। और अगर तुम जरा अपने अंदर और चारों ओर देखो तो पहचान जाओगे कि स्थायी तथ्य है। तो अगर तुम्हारे अंदर कुछ सामान्य बुद्धि है तो तुम कहोगे, किसी भी चीज से डरना मूर्खता है, क्योंकि यह ठीक ऐसा है जैसे मैं उस चीज को अपने पास आने का इशारा कर रहा हूँ।

अगर मेरा कोई दुश्मन है जो मुझे मार डालना चाहता है तो मैं जाकर उससे यह न कहूँगा, "देखो, तुम जिसे मारना चाहते हो, वह मैं हूँ।" यह कुछ ऐसी बात है। तो चूंकि भय बुरा है, हम उसे नहीं रखेंगे और अगर तुम कहो कि तुम अपनी बुद्धि द्वारा उसे रोकने में असमर्थ हो तो इससे यह पता लगता है कि तुम्हारा अपने ऊपर कोई नियंत्रण नहीं है और अपने-आपको नियंत्रित करने के लिये तुम्हें कुछ प्रयास करना चाहिये। बस यही।

गुह्यवादियों के लिये सबसे अच्छा उपाय यह है कि जैसे ही तुम्हें किसी चीज का डर लगने लगे, भगवान् के बारे में सोचो और उनकी भुजाओं में या उनके चरणों से लिपट जाओ और भीतर, बाहर, चारों ओर जो कुछ भी हो, उसकी जिम्मेदारी पूरी तरह उन पर छोड़ दो और तुरंत भय गायब हो जायेगा। गुह्यवादी के लिये यही उपाय है और यह है भी सबसे सरल। लेकिन हर एक को गुह्यवादी होने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता।

-श्री अरविन्द आश्रम की श्रीमां

www.the-comforter.org

"मंत्र (नाम) जप"

शब्द (मंत्र) की उत्पति मात्र उस परम सत्ता की ही देन है। प्रत्येक अक्षर किसी न किसी शक्ति का स्वरूप है। सारी शक्तियाँ मनुष्य के शरीर में स्थित हैं। हर शक्ति का उपयुक्त स्थान है। अतः उपयुक्त मंत्र का जप उसके स्थान विशेष पर ध्यान केंद्रित करके करने पर निश्चित समय में वह शक्ति अवश्य चेतन हो जायेगी। **हमारे धर्म की गुरु-शिष्य परम्परा इस पर विस्तार से प्रकाश डालती है।**

चेतन गुरु से जो मंत्र प्राप्त किया जाता है। उस मंत्र को सिद्ध करने की शिष्य को कोई आश्यकता नहीं होती। चन्द दिनों में वह शक्ति अपनी प्रत्यक्षानुभूति कराने लगती है। जिस व्यक्ति ने चेतन गुरु से दीक्षा ली है, और शक्तिपात के द्वारा गुरु अपनी ताकत उसे दे कर गया है, केवल वही मंत्र दीक्षा देने का अधिकारी है।

ऐसा व्यक्ति जब मंत्र दीक्षा देता है तो वह शक्ति मानव के कल्याण हेतु कार्य करती है। परन्तु अगर मंत्र दीक्षा देने वाला 'गुरु' चेतन नहीं है तो उस मंत्र की शक्ति कभी भी प्रकट नहीं होगी। अगर अधिक कष्टों के कारण एकाग्रता अधिक हुई तो लाभ के स्थान पर हानि होने की अधिक सम्भावना है, क्योंकि जब वह शक्ति चेतन होगी तो सक्षम गुरु के आशीर्वाद के अभाव में मनुष्य उसकी ताकत को सहन नहीं कर सकेगा और अनेक प्रकार की मानसिक व दिमागी बीमारियाँ लगने की ही सम्भावना अधिक रहेगी। अगर चेतन गुरु ने मंत्र दीक्षा दी है तो वह शक्ति कोई भी हानि नहीं पहुँचा सकती है।

समर्थ सद्गुरुदेव
श्रीरामलालजी सियाग
8 मार्च 1988

www.the-comforter.org

इक्कट्ठे कर रखे हैं, जिससे वर्तमान दुनिया कई बार तबाह हो सकती है। और ये प्रत्येक देश स्वयं बनाता जा रहा है और दूसरे देशों को सख्ती के साथ मना करता जा रहा है और किसी ने उल्लंघन किया जो उसका नतिजा क्या होगा? पूरी दुनिया को मालुम है।

शांति के नाम पर चलाये जाने वाले सारे प्रयास विफल हो गए और अशांति कई गुना बढ़ गई।

वर्तमान में कई लाइलाज बीमारियाँ लाखों लोगों को काल-कवलित कर रही हैं। भौतिक विज्ञान ने अरबों रुपयों की फूँकन के बाद इलाज के नाम पर एक दवाई की खोज कर, उसका नाम उजागर कर पायी है-'बचाव ही उपचार' है।

कोई बीमारी कैसे हुई, जब तक उसकी तह में नहीं जाया जाता है, तब तक इलाज संभव नहीं है, यह बात विज्ञान मानती है।

किसी भी टोने टोटके वाले के पास जाओगे तो वह आपको यह बता देगा कि अमुख देवता का दोष है, आपको अमुख अमुख कर्मकाण्ड करना पड़ेगा। लेकिन कोई सटीक इलाज या समाधान नहीं है। बस बात को घुमाने के लिए, कई कमियों और निकाल देगा और मरीज पहले से ज्यादा मानसिक रूप से पीड़ित हो जाता है।

आज ब्रह्माजी की नाराजगी यही है कि उनकी आज्ञा का पालन नहीं हो पाया, इसलिए मानव जाति कष्टमय, दुखमय और मनोविकारों युक्त जीवन जी रही है और पूरी दुनिया एक दूसरे की बुराईयों में ही 'ईश्वर' की सर्वोच्च कृति 'मानव' की आयु को पूर्ण कर रही हैं।

मानव के विकारों को दूर करने के लिए हर युग में वह सृष्टि रचयिता मानव देह धारण कर पृथ्वी पर अवतरित होता है, और उसके विकास के सोपान में सीढ़ियों के कुछ पायदान(गाटे)लगाकर अंतर्धान होता है।

भारत में दस अवतारों की अवधारणा है। मत्स्यावतार से श्री परशुराम, श्रीराम और श्री कृष्ण तक नौ अवतारों ने पृथ्वी पर प्रकट होकर मानवीय चेतना को वर्तमान स्थिति तक पहुँचाया है। लेकिन अभी मानव के क्रम विकास में ब्रह्मा जी के थैलों की स्थिति को व्यवस्थित क्रम में नहीं जमाया गया है। इसलिए मनुष्य अभी अधुरा है।

मनुष्य जाति की पूर्णता के लिए, ब्रह्माजी के थैलों को व्यवस्थित क्रम में जमाने के लिए, उनको स्वयं को ही आना था। क्योंकि थैले इतने गहरे जम गये है जो परब्रह्म के बिना बदलाव संभव नहीं। **इसलिए दसवें अवतार का अवतरण होना था जो 24 नवम्बर 1926 को हो गया और उसने मानव की पूर्णता के लिए एक अमर पथ दे दिया है। उस पथ पर चलकर ही संपूर्ण मानवता पूर्णता प्राप्त करेगी।**

अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर के संस्थापक व संरक्षक **समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग** का पृथ्वी पर अवतरण मानव जाति के उद्धार के लिए ही हुआ था। भारतीय नाथ योगियों की सिद्धयोग परम्परा के अनुसार शक्तिपात दीक्षा देकर, संजीवनी मंत्र के जप के साथ नियमित ध्यान द्वारा संपूर्ण परिवर्तन मानव जाति में लाकर बता दिया।

समर्थ सद्गुरुदेव ने नशा करने वाले से कभी भी घृणा नहीं की और न ही कोई उपदेश दिया कि नशा बहुत बुरी चीज है, इसे नहीं करना है। उनको कहा कि एक बोटल शराब की जगह डेढ बोटल शुरू कर दे लेकिन इस मंत्र को भी मत छोड़, मंत्र का सघन जाप कर, फिर नशा कितने दिन करता है !

नाम और नशा दोनों साथ चल ही नहीं सकते। इस प्रकार नाम जप और ध्यान द्वारा सभी रोगों व नशों से सहज में मुक्ति मिल रही हैं।

नशा क्यों शुरू किया, कब से कर रहा है? कितना नुकशान हुआ?

बीमारी कैसे हुई? कितने समय से हैं?

किस जाति का है?
किस धर्म का है?
किस देश का है?
स्त्री है?
पुरूष है?
बालक है?
बुड्ढ़ा है?
अमीर है?
गरीब है?
राजा है?

सद्गुरु सियाग की तस्वीर, बदलेगी दुनिया की तकदीर।

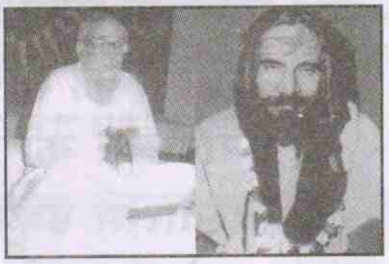

''एक नाम को जपो, नाम जप से परिवर्तन आएगा।''

''न खाद्य है-न अखाद्य है, न पाप है-न पुण्य है, न धर्म है-न अधर्म है। बस एक नाम को जपो, नाम जप से ही परिवर्तन आएगा।''

सद्गुरुदेव सियाग ने मनुष्य मात्र को ईश्वर का स्वरूप मानकर शक्तिपात दीक्षा दी। अब इस अमर ज्ञान का सदुपयोग करना, साधक का कर्तव्य है।

www.the-comforter.org

रंक है ?

मानव जाति में जन्मा कोई भी प्राणी है ! परम सद्गुरुदेव ने इन सबको न देखकर, एक आत्मा देखकर दीक्षा दी है।

सद्गुरुदेव सियाग ने कहा कि –''एक नाम को जपो, नाम जप से परिवर्तन आएगा।''

''न खाद्य है–न अखाद्य है, न पाप है–न पुण्य है, न धर्म है–न अधर्म है। बस एक नाम को जपो, नाम जप से ही परिवर्तन आएगा।''

''जो नाम बताऊँ, उसको जपना पड़ेगा। फिर सारे परिवर्तन आएंगे।'' और परिवर्तन आ रहा है।

और जिसने सद्गुरु आज्ञा का पालन कर, मंत्र जप और गहन ध्यान किया है उनमें बड़ा ही अद्भुत बदलाव आया है, आ रहा है और आएगा।

सद्गुरुदेव ने कहा कि वर्तमान में कलियुग के गुणधर्म के कारण सारी मानव जाति की एक सी स्थिति है।

वर्तमान मानव जाति को समझाने के लिए सद्गुरुदेव सियाग ने एक उदाहरण दिया कि **''जब सूर्य उदय हो जाता है तो चाँद-तारे आकाश में रहते तो है, लेकिन उनकी कोई कीमत नहीं होती है, मगर सूर्य उनका विरोध नहीं करता है, वह अपना काम करता है।''**

सूर्य को अपनी सामर्थ्य का मालुम है कि मुझे सिर्फ प्रकाश की किरण फैलानी है, चाँद-तारों का वर्चस्व स्वतः ही निष्प्रभावी हो जाएगा। ऐसे ही परम सत्य के राही को व्यर्थ में अपनी शक्ति और सामर्थ्य को किसी भी उलझन और आलोचना में खर्च करना ही नहीं है। नम्रता और प्रेम से किसी को भी समझा दो।

पूरी दुनिया के लिए एक दिव्य संदेश है-कि सद्गुरुदेव सियाग ने कभी ये नहीं देखा कि कौन कैसा है ? अच्छा है या बुरा, ऊँच-नीच कुछ भी नहीं। सार्वजनिक रूप से मानव मात्र को ईश्वर का स्वरूप समझकर, उनके कल्याण के लिए सबके साथ एकसा बर्ताव करते हुए, **एक संजीवनी मंत्र दिया है ।**

सद्गुरुदेव द्वारा दिये गए संजीवनी मंत्र के सघन जप व नियमित ध्यान से ही बड़ा अद्भुत बदलाव आ रहा है।

> कौन क्या कर रहा है ? सही है या गलत है ? किसी तरफ ध्यान न देकर, सिर्फ सद्गुरुदेव सियाग के पावन चरण कमलों में अपने चित्त को लगाकर, गृहस्थ जीवन का पालन करते हुए, गहन आराधना ही अपने जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए।

एक राय उन साधकों के लिए है जो बात-बात पर आलोचना कर रहे हैं, उनसे अपेक्षा है कि जब आपने दीक्षा ली थी तब गुरुदेव ने आपको सिर्फ दो ही काम करने का बोला था-**नाम जप व ध्यान।** और यह भी बोला था कि आप 15-20 दिन इसका सघन जाप करोगे, दिन में कई दफे यह याद करलो कि मंत्र जपा जा रहा है या नहीं ? तो अजपा जाप शुरू हो जाएगा। फिर जपने के झंझट से छुट्टी।

सद्गुरुदेव के प्रवचन को बार बार सुनो। सद्गुरुदेव से करूण प्रार्थना करो कि उनकी वाणी अपने हृदय पटल पर अंकुरित हो जाए अर्थात् हमें समझ में आ जाए।

उनकी वाणी में बड़ा ही रहस्य होता है। कुछ बातों का अर्थ और रहस्य अन्तर्मुखी आराधना से ही समझ में आता है। गीता में भी 10 वें अध्याय तक भगवान् श्री कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देकर खूब समझाया परंतु कुछ भी समझ में नहीं आया और ज्योंहि 11 वें अध्याय में अपना विराट स्वरूप दिखाया तो सब कुछ समझ में आ गया और अर्जुन ने पूर्ण समर्पण कर लिया।

अपने आत्म कल्याण के लिए खूब आराधना करो ताकि हम सद्गुरुदेव के दिव्य पथ के पथिक बन सकें।

कौन क्या कर रहा है ? सही है या गलत है ? किसी तरफ ध्यान न देकर, सिर्फ सद्गुरुदेव के पावन चरण कमलों में अपने चित्त को लगाकर, गृहस्थ जीवन का पालन करते हुए, गहन आराधना ही अपने जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए।

विश्व के सब देशों के लिए संदेश है कि विश्व में शांति का परम पथ प्राप्त करना चाहते हो तो सद्गुरुदेव सियाग की अन्तर्मुखी आराधना ही एक मात्र पथ है।

दुनिया में जिस दिन भी देवत्व जीवन का स्वरूप प्रकट होगा, शांति स्थापित होगी तो उसका पथ सद्गुरुदेव सियाग का सिद्धयोग दर्शन ही होगा।

ब्रह्माजी के थैलों को यथास्थिति रखने के लिए सद्गुरुदेव के शिष्यों को अन्तर्मन की शुद्धि के लिए भीतर की गहराईयों में डुबकी लगानी होगी।

-सम्पादक

www.the-comforter.org

क्या एक निर्जीव चित्र, सजीव (मानव) पर प्रभाव डाल सकता है?

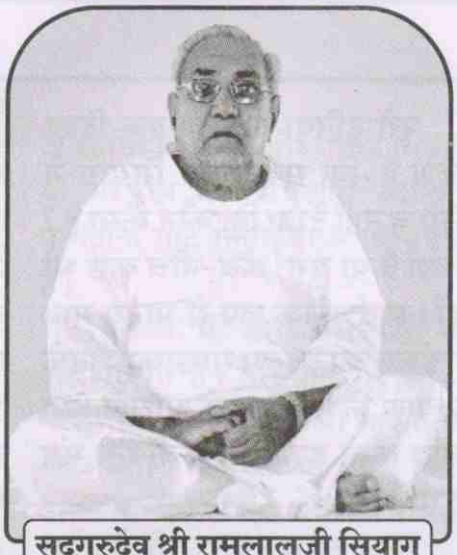

सद्गुरुदेव श्री रामलालजी सियाग

प्रत्यक्ष को प्रमाण क्या? ध्यान करके देखें।

▶ ध्यान की विधि ◀

गुरूदेव सियाग सिद्धयोग आराधना की एक सरल विधि है। इसमें दो कार्य करने होते हैं। सघन नाम (मंत्र) जप व नियमित ध्यान।

आरामदायक स्थिति में बैठकर थोड़ी देर के लिए गुरुदेव के चित्र को एकाग्रता से खुली आँखों से देखें। फिर आँखें बंद करके समर्थ सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग के चित्र को अपने आज्ञाचक्र पर (जहाँ बिन्दी या तिलक लगाते हैं।) केन्द्रित कर, गुरुदेव से 15 मिनट के लिए ध्यान स्थिर करने की करुण प्रार्थना करें। अब गुरुदेव द्वारा दिये गए संजीवनी मंत्र का मानसिक रुप से सघन जाप करें। (बिना होंठ-जीभ हिलाए)। नाम जप ही ध्यान की चाबी (Key) है। इसको तेल की धार की तरह, हर समय (Round the Clock) सघन मंत्र जप करें।

इस दौरान कोई भी यौगिक क्रिया (आसन, बंध, मुद्रा या प्राणयाम) हो तो घबराएँ नहीं तथा न ही इन्हें रोकने का प्रयास करें। ध्यान अवधि पूर्ण होते ही सामान्य स्थिति हो जाएगी। इस विधि से सुबह-शाम खाली पेट नियमित रुप से (केवल 15 मिनट) ध्यान करते रहें।

▶ Method of Meditation ◀

Sit in a comfortable position. Look gurudev's picture for some time then close your eyes and try to imagine gurudev at place between your eyebrows (third eye) and request for 15 minutes of meditation. While thinking of gurudev's image, silently chant (without moving your lips or tongue) gurudev's mantra or any spiritual force (**Ram, Krishna, Jesus, Waheguru, Allah etc.**) which you believe in.

During meditation if you experience any kind of automatic movement then don't try to stop. The movements will stop automatically after 15 minutes.

www.the-comforter.org

शक्तिपात-दीक्षा

शक्तिपात दीक्षा एक महान् और दिव्य विज्ञान है जिसके द्वारा सिद्धगुरु अपनी दिव्य शक्ति को शिष्य में सीधे संप्रेषित कर, उसकी सुषुप्त शक्ति कुण्डलिनी को जाग्रत करते हैं।

गुरु शिष्य परम्परा में चार प्रकार से शक्तिपात दीक्षा का विधान है। स्पर्श द्वारा, दृष्टि द्वारा, संकल्प व शब्द (मंत्र) दीक्षा द्वारा।

- गुरुदेव का मंत्र चेतन (Enlightened) मंत्र है, इसमें प्राण प्रतिष्ठा की हुई है। इस मंत्र में असंख्य ऋषियों की कमाई है।
- नाम जप ही चाबी (Key) है। इसको तेल की धार की तरह, हर समय (Round the Clock) सघन जपो।

गुरुदेव की दिव्य आवाज में संजीवनी मंत्र सुनने के लिए डायल करें–07533006009

सभी जाति-धर्मों के जिज्ञासु स्त्री-पुरुषों को स्नेह निमंत्रण।

मुख्यालय : **अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र**

होटल लेरिया के पास, चौपासनी, जोधपुर (राज.) 342 003 सम्पर्क : 0291-2753699, 9784742595

Web : www.the-comforter.org

www.the-comforter.org

अवतार

पुरुषों का 'मैं' बहुत सूक्ष्म होता है। इस ''मैं'' के भीतर से ईश्वर को सदा ही देखा जा सकता है। जैसे एक जन दीवार के एक ओर खड़ा है और दीवार के दोनों ओर खुले हुए विस्तीर्ण मैदान हैं। दीवार में अगर एक छेद रहे तो उसमें से दूसरी ओर का सब कुछ स्पष्ट दिखाई पड़ता है। और छेद अगर कुछ बड़ा हो तो एक ओर से दूसरी ओर आना-जाना भी किया जा सकता है।

अवतार-पुरुषों का 'मैं' इसी तरह छेद वाली दीवार है। दीवार के एक ओर रहने पर भी उन्हें दूसरी ओर का वह विस्तीर्ण मैदान दिखाई पड़ता है। इसका अर्थ यह है कि देह धारण करने पर भी वे सदा ''योग'' में रहते हैं। और इच्छा होने पर छेद से उस पार जा समाधिमग्न भी हो सकते हैं। छेद बड़ा हो तो वे बार-बार आना-जाना भी कर सकते हैं, यानी समाधिमग्न हो, फिर नीचे उतर आ सकते हैं।

अवतार को पहचान सकना बहुत कठिन है। यह मानो 'अनन्त' का 'सान्त' बनकर लीला करना है। जब भगवान् श्रीरामचन्द्र अवतीर्ण हुए थे, तब केवल बारह ऋषियों ने उन्हें पहचाना था कि वे अवतार हैं। भगवान् जब अवतार ग्रहण करते हैं, तब बहुत ही कम लोग उन्हें पहचान पाते हैं।

– स्वामी श्री रामकृष्ण परमहंस

R.N.I. NO. : RAJMUL/2008/26365 * POSTAL REGD. NO. JODHPUR/269/01.01.2017 & VALID UP TO 31.12.2019
DATE OF ISSUE : EVERY MONTH 27 & DISPATCH 28-29

ईश्वर?

प्रत्यक्षानुभूति और साक्षात्कार का विषय है!

हमारे दर्शन के अनुसार 'ईश्वर' प्रत्यक्षानुभूति और साक्षात्कार का विषय हैं। असंख्य विद्वानों ने गीता पर टीकाएँ लिख-लिखकर अपनी विद्वता का परिचय दिया है। सभी धर्माचार्य गीता से पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक आदि का भय दिखाकर तथा त्याग-तपस्या से जीवन बिताने का उपदेश देते हैं। गीता एक पूर्ण ग्रंथ है। वह जीवन के क्षेत्र का सम्पूर्ण ज्ञान कराती है। अत: तोड़-मरोड़कर उससे हर उपदेश देना संभव है, परन्तु गीता का रहस्य कुछ और ही है। अगर गीता में से 11 वें अध्याय को अलग करके, भगवान् 36 अध्यायों का उपदेश दे देते तो भी अर्जुन के कुछ भी समझ में नहीं आता। विराट स्वरूप से जिस प्रकार पूर्ण सत्य की प्रत्यक्षानुभूति और साक्षात्कार करवाया गया, उसे देखकर अर्जुन को पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो गया। उसके बाद अर्जुन के भाव बदल गये, पूछने का लहजा बदल गया। बाद में सभी प्रश्न बहुत ही करूण भाव से पूछे।

अत: गीता का रहस्य जितना अर्जुन समझा था, उतना कलियुग का मानव कैसे समझ सकता है। सम्पूर्ण गीता अन्तर्मुखी होकर प्रत्यक्षानुभूति और साक्षात्कार करने का ग्रंथ हैं। गीता प्रवचन का विषय है ही नहीं। गीता का हर श्लोक स्वयं सिद्ध मंत्र हैं। अत: गीता रूपी मंदिर में जब प्रभु की मूर्ति स्थापित हो चुकी है, जिसके दर्शन करने से अर्जुन को जिस दिव्य ज्ञान की प्राप्ति हुई, गीता वही उपदेश देती है। पूर्ण ज्ञान प्राप्त होने के बाद अर्जुन ने जो कार्य किया, गीता वही कार्य करने का उपदेश देती है।

सद्गुरुदेव सियाग द्वारा बताई गई आराधना (सघन नाम-जप व नियमित ध्यान) से साधक सब कष्टों व नशों से मुक्त होकर अपने असली स्वरूप अर्थात् कैवल्य पद तक पहुँच जाता है।

संदर्भ - सिद्धयोग पुस्तक-मोक्ष के प्रति इस युग का मानव उदासीन क्यों ? पृष्ठ-230

अवितरित प्रति निम्न पते पर लौटायें
Spiritual Science • स्पिरिचुअल साइंस
अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, होटल लेरिया के पास, चौपासनी
पोस्ट बॉक्स नं.41, जोधपुर (राज.) 342003 फोन: 0291-2753699, मो. : 9784742595

मुद्रित सामग्री (Printed Matter)

सेवा में,
श्रीमान्

स्वत्वाधिकारी : अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, जोधपुर के लिए प्रकाशक व मुद्रक राजेन्द्र कुमार चौधरी के लिए ताज प्रिण्टर्स, बोराणा हाऊस, जालोरी गेट के अन्दर, जोधपुर से केवल मुद्रित एवं अध्यात्म विज्ञान सत्संग केन्द्र, होटल लेरिया के पास, चौपासनी, जोधपुर (राजस्थान) से प्रकाशित। सम्पादक - रामूराम चौधरी